# इस्लाम और पर्दा

**(लेखकः- अल्लामा ज़ीशान हैदर जव्वादी)**

**(अनुवादकः- सैय्यद गुलाम हुसैन सदफ़ जौनपुरी)**

अलहसनैन इस्लामी नैटवर्क

## प्राक्कथन

औरत का समाज में स्थान एंव महत्व के विषय पर बहुत से लेख लिखे जा चुके हैं। आज के इस नवीन युग में पूरे संसार में सत्री जाति की स्वत्रंता के लिये संघर्ष हो रहा है और यहाँ संघर्ष पुरूषो की तरफ़ से है ऐसा प्रतीत होता है जैसे स्वयं स्त्रीयाँ अपने हित अहित, अपनी परतंत्रता और स्वतंत्रता के विषय में विचार करने में सक्षम न हो और इस कार्य का उत्तरदायित्व पुरूष जाति के कांधो पर ही रूका है।

इस संघर्ष और आन्दोलन को आड़ बना कर बहुधा धर्मो पर दोषारोपण किया जाता है और इस दोषारोपण का प्रमुख लक्ष्य इस्लाम धर्म को बनाया जाता है और यह वयक्त करने का प्रयत्न किया जाता है कि इस्लाम ने औरतों को "परदे" के बन्दीग्रह में डाल कर स्त्रियों का सबसे अधिक शोषण किया।

यदि न्याय की दृष्टि से देखा जाए तो सत्यता इसके विपरीत है इसलिये की इस्लाम नें स्त्री को दासी नहीं समझा है बल्कि उसको उसका उचित स्थान दिया है। इस्लाम की दृष्टि में एक स्त्री का कार्य क्षेत्र से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है इसलिये कि भविष्य के लिये पुरूषों का योगदान केवल नई पीढ़ियों की सृष्टि सृजन तक सीमित है जबकि स्त्रियों पर सृष्टि सृजनता के साथ नई पीढ़ी के

संस्कारों की रचना आने वाली पीढ़ी को मानवता के उच्च गुणों से सुशोभित करना इत्यादि का दायित्व भी नीभाना पड़ता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भविष्य के विषय में एक पुरूष से ज़्यादा एक स्त्री का महत्व है और जो जितना महत्वपूण होता है उसकी सुरक्षा का उतना ही अधीक ध्यान रखा जाता है आप किसी कार्यालय में चले जायें तो आपको प्रतीत होगा कि एक बाबू जो फ़ाइलों के मध्य बैठा कार्यरत है प्रकट में वह आफ़िस कार्य कर रहा है और कार्यालय अधिकारी को स्त्रीयों की भांति पृथक, कक्ष में पर्दे के भीतर स्थान देकर एक अलग कक्ष में बैठा दिया गया है, जहाँ बाबू की सीट से कम कार्य है मगर उसकी सुरक्षा ज़्यादा है उसको रक्षा कर्मी भी मिला है चपरासी भी है क्यों केवल इस लिये की वह अधिक महत्वपूर्ण है। कार्य बाबू अधिक करता है मगर कार्य की रूप रेखा अधिकारी बनाता है।

ठीक उसी प्रकार जीवन रूपी इस कार्यालय में वर्तमान की कार्यशैली और जीवन यापन का कुल भार पुरूष रूपी बाबू के सर पर हैं परन्तु भविष्य की पीढ़ियों की कर्मठता का मानचित्र केवल स्त्री रूपी अधिकारी द्वारा बनाया जाता है। इसी कारण इस्लाम ने स्त्री को महत्वपूर्ण मानते हुए गृह कक्ष में रहने की अज़ा दी जिस प्रकार एक अधिकारी का अपमान है कि वह बाबुओं वाले कार्य करे उसी प्रकार एक स्त्री का यह अपमान है कि पुरूषों के कार्य वह करे।

फिर सृष्टि की संरचना पर विचार करते हुए हर न्यायप्रिय व्यक्ति यह अनुभव कर सकता है कि पुरूष प्राकृतिक रूप से बलिष्ठ है और स्त्री प्राकृतिक रूप से कोमल जो बलिष्ठ है उसे भोतिक आवश्यकताओं की पूर्ती का कार्य करना चाहिये और जो कोमल है उसे मानसिक और अन्तरात्मा की भांति तथा रचनात्मक कार्य करना चाहिये इसलिये प्रकृति ने पुरूष को शौर्य, वीरता, बलिष्ठता का प्रतीक माना है।

परन्तु आज के इस युग में आधुनिकता के नाम पर स्त्री की लज्जा, शीलता, शालीनता, सौन्दर्य आदि गुणों को वासना की प्रतिपूर्ति बना देना चाहा है। ऐसे भयानक वातावरण में बस अल्लाह ही समाज की इस डूबती नैया का बेड़ा पार लगाए। आमीन।

प्रस्तुत पुस्तक "परदा" अल्लामा ज़ीशान हैदर जव्वादी की एक ऐसी कृति है कि जिसमें बहुत संक्षेप में क़ुरान और हदीस के प्रकाश में स्त्रियों के वास्तविक मूल्यों को उनके महत्व व स्थान को दर्शाया गया है तथा इस बात की बौध्दिक द़ृष्टि से विवेचना की गई है कि समस्त विचार धाराओं में केवल इस्लाम ही ऐसा धर्म है जिसने औरत को उसके सही स्थान पर पहुँचाया अर्थात वासानात्मक समाज की पथ भ्षट दृष्टि से बचा कर उसे परदे की सुरक्षा में रखा।

प्रस्तुत किताब चूँकि उर्दू में थी अतः मैंने यह चाहा कि हिन्दी पढ़ने वाले इस अमूल्य कृति से लाभावन्चित हो इसी कारण इसका हिन्दी रूपान्तरण इस्लाम और पर्दा के नाम से प्रस्तुत करने का बीड़ा उठाया है।

अन्त में मैं उन लोगों का आभार प्रकट करना भी आवश्यक समझता हूँ जिन्होंने मुझे इस पुण्य कार्य में सहयोग दिया विशेष कर मौलाना सदफ़ ज़ैदी का अभारी हूँ कि जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर इस पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद किया। मैं मौलाना ज़िशान हैदर जव्वादी का भी अभारी हूँ कि उन्होंने अपनी इस पुस्तक का हिन्दी संस्करण प्रकाशित करने की मुझे अनुमति दी।

सै0 अली अब्बास तबातबाई

(आप ये किताब अलहसनैन इस्लामी नैटवर्क पर पढ़ रहे है।)

## हिन्दी अनुवाद

महा पवित्र ईश्वर के नाम से

कटुक.......... प्रखर ............कटु

स्त्री................ स्वाभिमान ................. उपदेश

स्त्री! मानव समाज का वह महत्वपूर्ण स्तम्भ जिसके बिना मानव जाति असमाप्त एंव मनुष्यता अपूर्ण रह जाति है तथा मानव जीवन का वह मूल केन्द्र जिसने बिना मनुष्य के अस्तित्व की परिधि का स्थापित होना सम्भवतः असम्भव और कठिन है। संसार में ऐसे मनुष्य मिल सकते है जो अपने अस्तित्व में माता पिता दोनो से निष्काम रहे हों ऐसे मनुष्य भी उपलब्ध हो सकते हैं जो अपनी प्रकृति में पिता से लालसा रहित रहे हों किन्तु मनुष्यता के इतिहास में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो अपने अस्तित्व में स्त्री क अनुगृहीत न रहा हो तथा जिसके अस्तित्व में माता पिता जैसे स्त्री का निवेश न रहा हो।

स्त्री मनुष्य की सभ्यता व प्रशिक्षण की वह मात्र उत्तरदायी है जिसके लालन पोषण पर संपूर्ण समाज की सभ्यता निर्भर है और जिसके लालन पालन पर समस्त समाज का कल्चर आधारित है। पुरूष के प्रशिक्षण का मैदान समाज व समुदाय है और स्त्री के प्रतिपालन का क्षेत्र उसके उत्संग (गोद) मनुष्य के पालन पोषण की प्रथम श्रेणी है। गृह गंत्व्य स्थान का दूसरा स्थान है और समाज तथा

सम्मेलन समाज के प्रशिक्षण का अंतिम अधिष्ठान। अतः मनुष्य की सभ्यता पर आवरण चढ़ाने और उसकी वास्तिविकता को छुपाने का कार्य तो पुरूष भी सम्मान कर सकता है किन्तु स्वभाव निर्माण और प्रकृति के प्रतिपालन का भौतिक कार्य स्त्री को अधिकृत है जैसी स्त्री होगी वैसी ही शिक्षा होगी तथा जैसा प्रथम चित्र होगा वैसा ही मानचित्र बनेगा। प्रसिध्द कहावत हैः-

खिश्ते अव्वल चूँ नेहद मेमार कज,

तां सुरय्या भी खद दीवार कज

(जब राजन प्रथम ईंट टेढ़ी रख देता है तो वह दीवार आकाश तक टेढ़ी ही जाती है)

स्वाभिमान ! यही से स्त्री जीवन में स्वाभिमान के महत्व का अनुमान होता है। स्त्री जितनी ही लज्जाशील होगी उसी के अनुसार सिक्षा भी सदाचारयुक्त व स्वस्थ होगी। स्वाभिमान से तात्पर्य मात्र लज्जा से सिर झुका लेना नहीं है वरन स्वाभिमान की परिधि में वे समस्त पुन्य तथा शिक्षायें आ जाती हैं जिनके बिना मनुष्य का प्रतिपालन अपूर्ण रह जाता है। एक स्वाभिमानी और समाजी प्रतिबंध का आदर करता है वहीं उन सैध्दाँतिक नियमों का भी कड़ाई से पालन करता है जिनकी सत्यता को स्वीकार कर चुका है। धर्म, विशवास तथा दृष्टिकोंण से अधिक महत्वपूर्ण स्वाभिमान को परख का कोई मानक नहीं। वर्तमान में समय में नैतिक स्वाभिमान के साथ- साथ धार्मिक स्वाभिमान का समाप्त हो जाना ही वह बड़ी

घटना है जिसपर प्रकृति माँ आठ- आठ आँसू बहा रही है। मुसलमान इस्लाम पर आघात धार्मिक पवित्र स्थानों का विनाश, धर्माविधान के नियमों तथा आदेशो की दुर्दशा देख रहा है तथा बहुत ही शाँति पूर्ण जीवन व्यतीत कर रहा है उसे न तो कभी इन आदेशों के नष्ट होने का दुख होता है तथा न उन शिक्षाओं की समाप्ती का दुख, बल्कि यदा कदा तो अपने कर्तव्यों के इस विनाश में वह बराबर का भागीदार बन जाताह तथा उसे अपने किये का आभास भी नहीं होता।

अमीरूलमोमिनीन अली इब्ने अबीतालिब (अ0) ने इसी मर्यादा व स्वाभिमान को चैतन्य हेतु मसजिदे कूफ़ा में बड़े ही तीखे स्वर में कहा था जब आप को सूचना मिली थी कि कुछ मुसलमान स्त्रीयाँ बाज़ारों में विचरन कर रही हैं तथा भीड़ भाड़ में अन्य पुरूषों के कन्धों से कन्धा मिला कर चल रही हैं तथा आपने इस सूचना का सिंहासन से वर्णन करते हुए अति वेदना युक्त प्रभाव युक्त तथा क्रोधातुर रूप में कहा थाः- क्या तुम्हे लज्जा नहीं आती ? क्या तुम में स्वाभिमान नहीं रह गया ? अर्थात यदि स्वाभिमान होता तो धार्मिक उदगार का आदर होता। परिवार के खुलेआम फिरने पर आपत्ति प्रकट करते। अन्य पुरूषों से स्त्रीयों के टकराव पर स्वाभिमान जाग उठता किन्तु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ जिससे ज्ञात होता है कि तुम्हारे स्वाभिमान की अनुभूति समाप्त तथा लज्जा का उदगार नष्ट हो चुका है। इस्लामी दृष्टिकोण से स्वाभिमान ही से उपदेश की राह मिलती है।

उपदेश ! उपदेश मनुष्य को अपने कर्म के परिणाम की ओर आकर्षित करता है। उपदेश अचेत को चेत में लाता है तथा वर्तमान के दर्पण में भूत का भयावह मुखड़ा दिखाता है। उपदेश प्राप्त व्यक्ति अपनी भूल पर बल नहीं देता तथा अपनी त्रुटि पर हठ नहीं करता उसके सम्मुख उस आग्रह का परिणाम तथा उस हठ का अन्त होता है।

वर्तमान युग में इस्लामी स्वाभीमान की कमी अथवा उसके अभाव ने जो शोकपूर्ण दृष्य प्रस्तुत किये हैं वह एक योग्य व्यक्ति के उपदेश हेतु पर्याप्त है। इस्लामी देशों एवं मुस्लिम समाज में अभी उपदेश की सम्भावनाऐं तथा आभास करने के अवसर उपलब्ध हो सकते हैं अभी शूक्र मांस तथा मंदिरा से अचेतना नाड़ियों में प्रविष्ट हो जाए। पशिचम अपनी करनी से इस कारण विवश है कि उसने पूर्व में ही सीधावट को तर्ज दिया है तथा शूक्र मांस एवं मदिरा को अपना जीवन अंग बना लिया है। उसके लिये उपदेश की संभावनाऐं अत्यंत कम है। उसके स्वाभिमान की नाड़ियाँ  इतनी मर चुकी हैं जिसकी नारी (मांदा) हर समय अनेको नरों से सम्बन्ध स्थापित रखती है तथा मदिरा एक ऐसी आनन्दयुक्त विपत्ति है जो आनन्द रूपी आपरण में स्नाय को जर्जर करके आभास शक्ति को लगभग नष्ट कर देती है। इसके अभ्यस्त व्यक्ति इस तातपर्य का विश्वास ही नहीं कर सकतें जिन्हें एक अवचेतनाबध्द अनुभूतशील तथा आत्म सम्मान रखने वाले मुसलिम समाज को विशवस्त कराया जा सकता है।

पश्चिम की यही वह चालाकी थी जिसे मुसलमान प्रारम्भ न समझ सका तथा अब समझने का समय आया तो वह अपनी आभास शक्ति को खो चुका था। पश्चिम ने अपनी मांसे भक्षक एंव मदिरा सेवन प्रवृति से यह निणर्य किया कि युवती का हाथ एक युवक के हाथ में पकड़ा देना कोई अवगुण नहीं है। सम्मिलित शिक्षा यौन सम्बन्धी समस्या का सर्वोच्च समाधान है। सम्मिलित नृत्य मनुष्य की सभ्यता का उत्तम आदर्श है इस लिये प्रकार अपनी यौन सम्बन्धी संतुष्टी की सामग्री तो उपलब्ध हो जाती है, चाहे अपनी पुत्रीयाँ अन्य पुरूषों के प्रयोग में ही क्यों न आजाऐं। इसका आभास इस कारण भी नहीं होता कि मदिरा सेवन ने आभास की नाड़ियों को दुर्बल कर दिया है तथा शूक्र की प्रवृत्ति ही यह है कि वह अपनी स्त्री (मादा) के साथ अन्य नर के सम्बन्ध को सरलता से देख सकता है तथा उस पर कोई प्रतिशोध भावना उतपन्न नहीं होती किन्तु जब यह सभ्यता पूरब में आई तो इसकी बड़ी हँसी उड़ाई गई तथा स्वाभिमानी व्यक्तियों ने इसके विरुध्द तीव्र विरोध प्रकाशन किया। महाप्रलय यह हुआ कि यह सभ्यता शासक तथा विजयी जाति के सुरक्षित बक्सों में बन्द होकर आई थी अतः उन्होंने हंसाई के मार्ग को बल से रोका तथा प्रवृत्ति को बदलने हेतु त्वरित उपाय धारण करना आरम्भ कर दिया। उन्हें यह विदित था कि मदिरा तथा शूक्र मांस का विमुग्ध (प्रेमी) समाज इस सभ्यता का स्वागत करता है और इन दोनों वस्तुओं का विरोध समाज उसका विरोध करता है इस कारण उन्हें मौलिक चिन्ता यह संबध्द हुई कि

समाज को इन दोनों ही वस्तुओं से परिचित कराया जाए। शासक वर्ग हेतु यह कार्य कठिन नहीं होता तथा अपरिपक्य बुध्दि वालों को विचलित करने में कोई विशेष कठिनाई नहीं होती अतएव उन्होंने उच्च शिक्षा को अपने क्षेत्र में आलंबित करके तथा उच्च पदों के पणों (शर्तों) में अपने समाज में स्थायित्व का प्रतिबन्ध लगाकर पूर्वी सभ्यता के उपासकों को इस बात पर विवश कर दिया कि वह पश्चिम में जीवन व्यतित करें तथा दो चार वर्ष वहाँ की सभ्यता का सामना करें। वह सभ्यता जिसमें मदिरा जल का प्रतिस्थानी हो, शूक्र मांस भोजन का प्रमुख भाग हो तथा स्त्रीयों की वस्त्रविहीनता एंव आधिक्य पग पग पर दुष्टि प्रलोभन हेतु आमंत्रित कर रहा हो। परिणाम यह निकला कि यह व्यक्ति अपनी मूल लज्जा व स्वाभिमान तज कर अपने साथ एक अनुलग्नक लेकर पल्टो।

नारी मनुष्य की एक स्वाभिवक असामर्थ्य का नाम है जिसने भी इस एक पन्थ दो काज का प्रतिरूप देखा उसने सुदूर यात्रा की योजना बनाना आरम्भ कर दी तथा वहाँ से तीनों उपहार साथ लेकर पलटे मदिरा व्यसन (आदत), शूक्र मांस का स्वाद तथा नारी। ऐसी दशा में कौनसी धार्मिक शिक्षा इस उग्रवाद को रोकती है तथा कौन सा उद्देश्य इस बाढ़ के सम्मुख खड़ा होता है। शासन रूपी लोहें की दीवारें अपने कलचर की रक्षा हेतु पहले ही खड़ी थीं। परिणाम वही हुआ जो होना चाहिये था। उपदेश करताओं ने असक्षम होकर स्थल से पग हटा लिया, कम साहस वालों ने अपने समाज से संधि करली, लेखक गण ने पर्दे के शीर्षक पर

विवेचनात्मक सामग्री एकत्र करना प्रारम्भ कर दिया ताकि इस स्वभाविक स्वाभिमान की भावना को जगाने की चेष्टा समाप्त करदी। निर्लज्यता के कारणों को दृष्टिगोचर करना छोड़ दिया तथा आज समाज इस सीमा पर आ गया कि अन्य तो अन्य स्वयं मुसलमान भी स्वाधीनता के नाम पर लज्जा व स्वाभिमान गाड़ दे रहा है। नवीन सभय्ता का नाद उठा कर मर्यादा को लुटा रहा है। वक्ताओं पर प्रतिबन्ध लगाया जाता है, लेखनी पर पहरे बैठे जाते हैं, इस्लामी सभ्यता के उपासकों की हँसी उड़ाई जाती है तथा मनुष्य अपने ग्रीवा (गरदन) में मुखड़ा डाल कर नहीं विचार करता कि जहाँ सिनेमा हाल में हम कुछ चित्रों के दर्शक बन जाते हैं वहाँ अन्य युवक भी हमारी बहनों एंव कन्याओं के दर्शक बन जाते हैं। कालेजों में जहाँ शिक्षा दी जाती है वहीं पार्श्व में व्यभिचार के अड्डे भी स्थापित हो गये हैं। निर्लज्यता को आवश्यकता का नाम देना अन्य को तो संतुष्ट भी कर सकता है किन्तु अपनी अन्तर आत्मा को निश्चित नहीं कर सकता।

दृष्टिगत पत्रिका लिखते समय मुझे इस बात का पूर्ण विश्वास है कि मेरी वाणी मरूस्थल ध्वनि न सिध्द होगी, मेरी बात स्वाभीमानी व्यक्तियों के कानों तक पहुँचेगी तथा वह इन भ्यावह परिमामों से उपदेश ग्रहण करेंगे जिसमें आज हमारा समाज लिप्त है।

इस पत्रिका में प्रारंभिग रूप से इसलामी आदेशों के मूल आधारों पर वितर्क प्रस्तुत किया गया है तत्पश्चात कुरआन सुन्नत के दरपण में यह सिध्द किया

गया है कि इस्लाम लज्जा एंव स्वाभिमान का धर्म है वह परिवार की नारियों के खुले बाज़ार फ़िरने को सहन नहीं कर सकता, वह ऐसी शिक्षा को निन्दनीय मानता है जिसमें उसकी शिक्षा का आदर न किया जाए तथा ऐसी सभ्यता को असभ्यता मानता है जिसमें सभ्यता के आवरण में व्यभिचार तथा अशलीलता को परिपाटी बना दिया गया हो।

यह एक पीड़ित हृदय की पुकार है जो स्वाभिमानी मुसलमान को सुनाई जा रही है तथा यह दुहाई का नियम है कि वह प्रभावित करे अथवा न करे, उसे अवश्य लिया जाता है।

वस- सलाम आपकी सुरक्षा में

सैय्यद ज़ीशान हैदर

**आरम्भ** करता हूँ मैं ईश्वर के नाम से जो अति दयालू एवं कृपालु है।

आवरण (परदा) के शिर्षक पर लेखनी उठाने के पूर्व यह देख लेना आवश्यक है कि इस्लाम के आदेशों के आधार क्या हैं ? तथा इस्लाम ने इनके संरक्षण पर किस मात्रा में बल दिया है ? इस्लामी धर्माविधान के समस्त आदेशों तथा शिक्षाओं पर चिंतन करने पर यह परिणाम निकलता है कि इस्लाम के सम्पूर्ण नियमों का आधार पाँच मुख्य बातों पर निर्भर करता है, बुध्दि, धर्म, मन, प्रतीष्ठा एवं धन। इन्हीं बातों की रक्षा हेतु यह नियम बनाऐ गऐं हैं तथा इन्हीं की सुरक्षा हेतु धर्माविधान के ज्ञाताओं ने पूरा बल दिया।

**बुध्दिः-** समस्त मूल नियमों तथा उसकी शाखाओं का सार है बुध्दि है तो ईश्वर का ज्ञान तथा प्रलय पर विश्वास है। यदि बुध्दि नहीं तो ना तो उदगाम का विश्वास है और नहीं प्रलोक की परिकलपना। इसकी रक्षा इस सीमा तक आवश्यक है कि इस पर किसी साधारण आघात को भी सहन नहीं किया जा सकता तथा उसकी सुरक्षा का बड़ी दूर से प्रबन्ध किया जाऐगा।

**धर्मः-** धर्म की सुरक्षा इस कारण अनिवार्य है कि जबतक नियम के आधार नही सुदृढ़ होंगे उनका पक्का विश्वास न होगा, उस समय तक उप नियमों तथा आदेशों के पालन करने का प्रशन ही नहीं उठता संसार की कोई व्यवस्था ऐसी नहीं है जो

अपने मूल सिध्दान्तों तथा नियमों की रक्षा न करे। धर्म को बुध्दि से इस कारण पृथक किया गया है कि इस्लामी नियम किसी बुध्दिमान की बुध्दि का परिणाम नहीं है वह बुध्दि के विधाता की बुध्दि का परिणाम है जो सर्वथा बुध्दि है किन्तु किसी बुध्दि की उत्पत्ति नही। बुध्दि की उत्पत्ति वह व्यवस्था होती है जिनको संसार के बुध्दिमान बनाया करते हैं और इस्लाम की व्यवस्था बुध्दि के विधाता द्वारा निर्मित है इस्लाम में बुध्दि नियम निर्माता नहीं वरन् नियम का बोध कराने वाली है तथा उसके गुण अवगुण का निर्णय करने वाली है अतः धर्मरक्षा नियम को जीवित रखने हेतु आवश्यक है तथा बुध्दि का संरक्षण नियमों की शुध्दि हेतु अनिवार्य है।

(आप ये किताब अलहसनैन इस्लामी नैटवर्क पर पढ़ रहे है।)

**मनः-** प्रसिध्द कहावत है कि जान है तो संसार (जहान्) मनुष्य जीवित है तो बुध्दि भी है, धर्म भी है मर्यादा भी है और यदि मृत्यु हो गई तो इनमें से कुछ भी नहीं अतः जीवन का महत्व एवं रक्षा इन सब के सुरक्षित रखने के लिये आवश्यक है। जीवन का सम्मान एक दृष्टिकोण से बुध्दि तथा धर्म से अधर्म (निम्न) आवश्य है कि ऐसे जीवन से क्या लाभ जिसमें बुध्दि उचित निर्णय योग्य न हो तथा क्रिया उचित नियमों के अधीन न हो किन्तु अन्य दृष्टिकोण से जीवन इन दोनो से अधिक महत्वपूर्ण तथा वस्तु है कि उसी के बल पर दोनों की उन्निति है तथा उसकी समाप्ति (मृत्यु) से दोनो का संबध विच्छेद हो जाता है।

**प्रतिष्ठाः-** प्रतिष्ठा मानवप्रवृत्ति की सर्वश्रेष्ठ पूँजी है जिसकी सुरक्षा हेतु मनुष्य क्या कुछ समर्पित नहीं करता प्रतिष्ठा प्रिय न होती तो लोग उसके लिये जीवन एवं धन का बलिदान न करते। जीवन एवं धन जैसी बहुमूल्य वस्तु का समर्पण इस बात का परिणाम है कि मानव प्रवृति में एक ऐसी भावना आवश्य है जो उसे मर्यादा की रक्षा हेतु उधव (आमादा) करता है तथा उसे बड़ी से बड़ी आहूति हेतु तत्पर करता है।

**धनः-** सामाजिक संगठन तथा व्यक्तिगत जीवन दोनो हेतु धन का एक आधारभूत स्थान है। रोटी वस्त्र की प्रशन मनुष्य के जीवन का आधार भूत प्रशन है तथा इसका उत्तर धन के अतिरिक्त किसी के पास नहीं है। धन से अभिप्राय मात्र मुद्रा से नहीं है वरन् जीवन व प्रतिष्ठा के अतिरिक्त इस मायावी संसार में जो कुछ है वह धन ही कहा जाएगा, भोजन भी धन है तथा मुद्रा भी धन है, सदन व निवास स्थान भी, भौतीक शरीर का अस्तित्व धन के बिना सम्भव नहीं, धन की रक्षा उतनी ही आवश्यक है जितनी शरीर की।

उपरोक्त लिखित विषयों में तीन वस्तुएं अर्थात बुध्दि मन तथा धन ऐही है जिनकी सुरक्षा पर समस्त समय के बुध्दिमान, धर्मज्ञानी एवं सत्यनिष्ठ एक मत हैं। मनुष्य धार्मिक हो या अधर्मी, धर्म का अनुयाई हो अथवा धर्म विमुख, ईश्वरवादी हो या ईश्वर विमुख इस बात को अवश्य स्वीकार करता है कि मानव जीवन हेतु बुध्दि तथा अनुभूति का अस्तित्व आवश्यक है। मानव जीवन का

स्थायित्व एक स्वभाविक या समाजिक कल्पना  है और इसी कारण आत्म हत्या निशिध्द है। धन जीवन के स्थायित्व का सर्वोच्च माध्यम है। उसका इतना ही महत्व है जितना एक जीवन के स्थायित्व का हुआ करता है।  विभेट ग्रस्त वस्तुऐं मात्र दो है, एक धर्म तथा एक सम्मान या मर्यादा। धार्मिक वर्ग वाले धर्म के महत्व तथा उसकी रक्षा पर विश्वास रखते हैं किन्तु नास्तिक वर्ग उसका पूर्णत्या विरोधी है, प्रकृति परिचित तथा अन्तर आत्मा विश्वासी वर्ग सम्मान तथा मर्यादा को अति महत्व देता है किन्तु अन्तर आत्मा विरोधी तथा प्रकृत विरोधी उसके महत्व का एक दम विरोध करता है धर्म तथा नास्तिकता के इस विभेद का आधार एक अन्य दारशनिक मतभेद है। दर्शन शास्त्र में प्राचीन काल से दो विचार धाराऐं प्रचलित हैं, एक दृष्टि में मानवीय तत्व मात्र (पदार्थ) है उसकी दृष्टि से बुध्दि महत्वपूर्ण है इसलिये की भौतिक अनुभूति है तथा अनुभूति जीवन के लिये अपरिहाय है। मन महत्वपूर्ण इस लिये है कि जीवन का स्थायित्व अनिवार्य है और धन महत्वपूर्ण इस कारण है कि वह भौतिक शरीर के स्थायित्व का सर्वोच्च माध्यम है द्वितीय विचार धारा मनुष्य को शरीर तथा आत्मा दोनों का संचय बताता है तथा उनके निकट मनुष्य इकाई नहीं द्वितीयक है, इकाई नहीं गौण है, यह द्वितीयता भी परस्पर अत्यंत विरोधात्मक है एक विशुध्द भौतिक और एक शुध्द अभौतिक तथा जब दोनों के स्वभाव में तीव्र मतभेद है तो दोनो के नोदन भी भिन्न होगें और एक का आहार दूसरे को संतुष्ट करने की व्यवस्था न कर सकेगा

स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार कहा जाए कि भौतिकता एवं अध्यात्मिकता धर्म एवं अनैश्वर वाद के मध्य मतभेद का विषय न बुध्दि है न मन, न धन वरन् जो कुछ भी विभेद है वह धर्म की महत्ता और मर्यादा की महिमा में है धर्म इन दोनों बातों को महत्व देता है और नास्तिकता इसकी तीव्र विरोधी है।

धर्म एवं मर्यादा की यही अध्यात्मिक एकता थी जिसके आधार पर अनेक हदीसों में स्पष्ट घोषणा की गई है कि जिसके पास लज्जा व स्वाभिमान नहीं उसके पास धर्म भी नहीं है इतिहास की प्रसिध्द घटना है कि मौलाए कायनात अमीरूल मोमिनीन (अ0) कूफ़ा में सिहांसन रूढ़ थे कि एक व्यक्ति ने सूचित किया कि आज कुछ मुसलमान स्त्रीयाँ बाज़ार में टहलती दिखाई दीं हैं ये सुनकर आपको तेज आ गया मस्जिद में जनसमूह के एकत्र होने के आदेश दिये जब मस्जिद मुसलमानों से भर गई तो आप सिहांसन पर पधारे और कहा कि सुना है कि तुम्हारी स्त्रीयाँ बाज़ार में निकलती हैं और लोगों की भीड़ भाड़ में परस्पर टकरा जाती हैं क्या तुम्हे स्वाभीमान नहीं- तुम्हें लज्जा नहीं आती स्मरण रहे जिसके पास लज्जा नहीं उसके पास धर्म भी नहीं।

इस घटना से स्पष्ट अनुभव होता है कि इस्लाम की दृष्टि में धर्म की आत्म लज्जा व स्वाभिमान है और इसका कारण यही है कि स्वाभीमान और धर्म दोनों अध्यात्मिक के दो आदर्श हैं जिनकी महिमा का स्वीकरण धर्म ही करता है नास्तिक्ता नहीं करती।

इस्लाम ने इन पाँचो वस्तुओं को महत्ता दी है किन्तु हर वस्तु का स्थान र्निदिष्ट किया है और हर एक पर प्रभाव डालने वाली वस्तु को निशिध्द एवं वर्जित कर दिया है उसकी दृष्टि से सबसे मुख्य व मूल वस्तु बुध्दि है यदि बुध्दि नहीं तो कुछ नहीं इसी कारण उसने बुध्दि को प्रभावित करने वाली वस्तुओं पर कड़ाई से रोक लगाई है। मदिरा सेवन, उसका निर्माण, बेचना, कृय करना, अठाना, रखना, अंगूर निचोड़ना हद ये है कि मदिरा बनाने के ध्येय से अंगूर की खेती तक को निषिध्द किया है जो अति सावधानी का सर्वोच्च उदाहरण है और जिसका दृष्टाँत दूसरे प्रसंग में नहीं उपलब्ध है।

बुध्दि के पश्चात द्वितीय स्थान धर्म का है धर्म अन बोध्दिक सिध्दाँतो का नाम है जिसका व्यवहार कल्याण एंव मुक्ति का लग्नक (ज़ामिन) है तथा आत्मा वह हृदय की संतुष्टि का कारण है धर्म रक्षा का प्रबन्ध अतिबल व वेग से किया गया है कि नास्तिक्ता निशिध्द है, नास्तिक्ता की वाणी निशिध्द है, कपटाचार अवैध, हिंसा वर्जित, प्रचार कर्तव्य, पथ- प्रदर्शन कर्तव्य, उपदेश व घोषणा कर्तव्य आदि आदि......

धर्म के पश्चात प्राण का क्रम आता है प्राण यदि प्राकृतिक नियमों के अनुसार धर्म से अधिक महत्वपूर्ण है किन्तु बौध्दिक्ता के आधार पर धर्म का महत्व जीवन से अधिक है इसी कारण धार्मिक पूर्ति हेतु मृत्यु अवगुण नहीं और नास्तिक होकर जीवित रहना इस्लाम के दृष्टिकोण से सर्वोत्तम दोष है तथा इसी कारण वृहत पापों

की सूची में प्रथम नाम नास्तिक्ता का है तथा अपवित्रता के आदेश भी बहुदैव वासियों के लिये हैं।

जीवन के उपराँत प्रतिष्ठा का स्थान है जहाँ से भाविक्ता एवं बुध्दि के मार्ग प्रथक हो जाते हैं बुध्दि जीवन की प्रतिष्ठा से अधिक प्रिय समझी जाती है तथा भाविक्ता का निर्णय ये होता है कि जब प्रतिष्ठा एवं मर्यादा न रही तो जीवित रह कर ही क्या करेगें इस्लाम ने इस प्रकार की चिन्तन विधि को मूर्खता माना है और बौध्दिक कार्य को इसके विपरित ठहराया है।

संसार में लोग साधारण से अपमान व अनादर का पाखंड बनाकर आत्महत्या कर लेते हैं तथा ये स्पष्टिकरण प्रस्तुत करते हैं कि इमाम हुसैन (अ0) ने कहा है कि सम्मान जनक मृत्यु अनादर के जीवन से उत्तम है ये लोग ये विचारने का कष्ट नहीं करते कि इमाम के इस वाक्य का क्या अर्थ है और इसका अर्थ यदि वही है जो लोगों के मन में है तो शाम के क्षेत्र में प्रवेश करने के उपराँत " ओक़ादा ज़लीलन " (मुझे अपमानित किया गया) कहने वाला इमाम क्यों जीवित रहने पर कटिबध्द हो गया और कम से कम मृत्यु की प्रथना क्यों नहीं की। इमाम का मृत्यु की प्रथना न करना इस बात का ज्वलंत प्रमाण है कि कथन का वह अर्थ कदापि नहीं जो साधारणतया किसी माँग के मनवाते समय लिया जाता है वरन् कथन का यह अभिप्राय है कि जब मनुष्य मृत्यु और जीवन के संघर्ष में फंस जाए कि एक ओर जीवन हो जो अपमान से घिरा हो तथा दूसरी तरफ़ वह मृत्यु हो जो

सम्मानजनक हो तथा परिस्थितियाँ इस बात का नोदन करें कि या तो अपमानित जीवन व्यतीत करो या सम्मानजनक मृत्यु स्वीकार कर लो तो मनुष्य का कर्तव्य है कि अपमान के साथ जीवित रहने को अस्वीकार करके सम्मानजनक मृत्यु को स्वीकार कर ले इसका ये अर्थ कदापि नहीं कि यदि जीवन में निरादर की सम्भावना उत्पन्न हो जाऐ तो मनुष्य आत्म हत्या कर ले इसलिये कि आत्म हत्या में जीवन मृत्यु का संर्घष नहीं होता बल्कि मौत को स्वेंच्छा से आमंत्रित किया जाता है और फिर आत्म हत्या को सम्मानजनक मृत्यु कहा ही नहीं जा सकता सम्मान तो मात्र ईश्वर की आज्ञा पालन में है आज्ञाकारिता से हटकर सम्मान को ढ़ूढ़ना सर्वथा मूर्खता है।

आपने बहुधा देखा होगा कि यदि किसी व्यक्ति का पुत्र अयोग्य, पुत्री कुचरित्र या स्त्री दुराचारी हो जाती है तो समाज में अपमान के भय से प्रभावित होकर वह आत्म हत्या कर लेता है तथा अपनी दृष्टिकोण से उसे अत्यधिक लज्जावान प्रकृति समझता है उसके विवेचना यही होती है कि अपमानजनक जीवन से सम्मान जनक मृत्यु उत्तम है किन्तु उसे सोचना चाहिये कि उस जीवन को न अपमानजनक जीवन कहते हैं न उस मृत्यु को सम्मानीत मृत्यु। अपमानजनक जीवन वह जीवन है जहाँ अधस्थूल (पस्ती) व अवगुण अपने द्वारा लाया गया हो और अपना आचरण कलंकित हो दूसरे के कार्य से अपने जीवन की निम्नता व तिरिस्कृत होने का कोई अर्थ नहीं है यह व्यंग्य व तिरिस्कार समाज की अज्ञानता

के कारण है या उस परिकल्पना पर है इन सभी व्यक्तियों के दुराचरण का कारण अनुचित पालन पोषण है, पालन पोषण तथा प्रशिक्षण मनुष्य का अपना उत्तर दायित्व है जिससे अचेतना कर्तव्य की त्रुटि के तुल्य है अन्यथा ऐसा न होता तो "भगवान क्षमा करे" जनाबे आदम (अ0) जनाबे नूह (अ0) जनाबे लूत (अ0) जैसे नबियों का जीवन भी अपमानीत जीवन होता क्योंकि उनकी संतान एवं स्त्रीयों ने भी किसी उच्च आचरण का प्रर्दशन नहीं किया इसके अतिरिक्त इस मृत्यु को सम्मानजनक मृत्यु भी नहीं कह सकते इसलिये कि इस मृत्यु में किसी प्रकार का सम्मान नहीं है न अपना न धर्म का, न समाज का सम्मान नहीं यह मृत्यु तो मात्र बाहय अपमान से भागना है तथा सम्मान अपमान से भागने का नाम नहीं वह एक अन्य बहुमूल्य वस्तु है जो अपराध के बाज़ार में नहीं उपलब्ध होता या दूसरे शब्दों में इस प्रकार कहा जाए कि इन परिस्तिथियों में आत्माहत्या करने वाले के विषय में ये नहीं कहा जा सकता कि उसने आत्म हत्या करके कोई सम्मान प्राप्त किया बल्कि यही कहा जाऐगा कि सम्मानजनक था इस लिये जीवन अर्पण कर दिया अर्थात सम्मान का सम्बन्ध उसके पूर्व जीवन की ओर होगा मृत्यु की ओर नहीं।

सम्मान वे अपमान दो ऐसे शब्द हैं जिनकी अपनी इस्लामी परिकल्पना है। सम्मान ईश्वर की आज्ञाकारिता का नाम है तथा अपमान आज्ञा की राह से विमुख हो जाने का। सम्मान कृतज्ञता से परचित होने का नाम है तथा अपमान कृतज्ञता

से विस्मृत का नाम है। सम्मान सिध्दान्त एवं नियमों की रक्षा का नाम है एवं अपमान स्पंदन हीनता व चिन्ता हीन्ता से स्तब्धता का नाम है, सम्मान सत्य कथन की घोषणा का नाम है तथा अपमान असत्य क हाथों पर प्रतिज्ञा करने का नाम है अतएव जब भी कोई ऐसा अवसर आजाऐगा कि मनुष्य के समक्ष दो विकल्प रख दिये जाऐं कि या असत्य की प्रतिज्ञा व प्रधानता करके अर्थात अपमानित होकर जीवित रहे या सत्य की घोषणा करके वीर गति प्राप्त करले तथा असत्य की प्राधीनता में अपमानित जीवन न बिताऐं।

इस्लाम की दृष्टि में मर्यादा और सम्मान का स्थान यदि जीवन के पश्चात है किन्तु अत्यधिक महत्व रखता है। जीवन से न्युन तो मात्र इस कारण है कि जीवन है तो प्रत्येक रोग का उपचार सम्भव है, प्रत्येक विमुखता से दृढ़ता की सम्भावना है, प्रत्येक कुटिलता उपरान्त सीधा हो जाने का प्रशन है किन्तु यदि जीवन ही समाप्त हो गया तो किसी बात की सम्भावना नही।

मर्यादा तथा सम्मान से तात्पर्य मात्र यौन सम्बन्धी केन्द्र बल्कि मर्यादा प्रत्येक उस कोष का नाम है जिसके प्रयोग की अनुमति न हो इसी कारण धर्म के आदेश को "धर्म विधान मर्यादा" कहते हैं तथा प्रकृति के नियमों को "प्रकृति नियम" की संज्ञा दी जाती है। मर्यादा का सम्बन्ध जिस प्रकार नारी से है उसी प्रकार पुरूष से भी है। नैतिक संसार में जिस प्रकार व्यभिचार को कुदृष्टि से देखा जाता है उसी प्रकार समालिंगन भी अति तृस्कृत एवं घृणित माना जाता है यह और बात है कि

पुरूष अपने पौरूष के कारण मर्यादा के सम्बन्ध में अधिक चिन्ताजनक नहीं है तथा स्त्री का सवाग अस्तित्व मर्यादा है। उसके शरीर का प्रत्येक अंग मर्यादा है, उसका प्रत्येक जीवन विभाग मर्यादा है जिस प्रकार प्रकृत ने बिना आज्ञा प्रयोग का अधिकार नहीं दिया है। स्त्री के सर्वाथा मर्यादा होने का इस से बढ़ कर कोई भी प्रमाण नहीं कि वर्तमान युग का अति निर्लज्य मनुष्य जिसका स्थाई धन्धा लम्पटता तथा दुराचार हो, तथा जो नैतिक आदर को नकारने वाला, तथा सदाचार व अवगुण विभेदों का विरोधी हो उसके सम्मुख भी यदि उसकी बहन, माता या पुत्री को कामयुक्त दृष्टि से देखा जाए तो वह सहन न कर सकेगा गुप्त रूप से कुकर्म करना सहज है किन्तु खुलेआम अपने दृष्टि कोंण का क्रियात्मक प्रचार करना बड़ा कठिन है। ऐसे अवसर पर कपटाचार का परदा फट जाता है तथा मनुष्य के वाह्यान्तर का भेद स्पष्ट हो जाता है।

इस्लाम ने मर्यादा की सुरक्षा हेतु दो प्रबन्ध किये है, एक का नाम है प्रकृति की चर्चा तथा दूसरे का नाम धर्म सम्बन्धि नियम है।

प्रकृति की चर्चा का अर्थ ये है कि इस्लाम ने पग पग पर मनुष्य को उस प्रकृतिक लज्जा की ओर आकर्षित किया है जो प्रत्येक मनुष्य के स्वभाव में होती है तथा जिसकी जितनी सुरक्षा अभीष्ट थी उतनी मात्रा में रख दी गई है। इमाम जाफ़र सादिक़ (अ0) का कथन है कि लज्जा के दस भाग है, जिनमें से नौ स्त्रीयों में हैं तथा एक पुरूष में। स्त्री में सुरक्षा की आवश्यकता अत्यधिक थी अतः उसमें

भावना तीव्र कर दी गई पुरूष में उतनी सुरक्षा अनिवार्य नहीं थी अतः भाव भी साधारण एवं दुर्बल श्रेणी में रखा गया। स्त्री का सम्बन्ध अपनी मर्यादा से होता है तथा पुरूष का सम्बन्ध अपनी स्त्रीयों की मर्यादा से होता है तथा किसी मात्रा में अपने नैतिक, अनुमान से जिन घर का अनादर उसके आचरण को आहात (मजरूह) कर देता है।

लज्जा व स्वाभिमान के विषय में कुछ बातों की ओर संकेत किया जा चुका है इस समय मात्र कुछ हदीसों की ओर संकेत करना प्रर्याप्त होगा जिस से यह अनुमान हो जाएगा कि इस्लाम धर्म में सतीत्व का क्या महत्व है तथा उसने उसकी सुरक्षा हेतु कैसी प्रबल व्यवस्था की है। कथन है " इस्लाम नग्न था उसका वस्त्र लज्जा है। उसका श्रिंगार प्रेम है। उसका सौजन्य सदाचार है, उसका स्तम्भ संयम व संयास है तथा उसका आधार हम रसूल के परिवार जनो की प्रीत है। इस कथन से स्वच्छ स्पष्ट होता है कि लज्जा से इस्लामी मर्यादा की सुरक्षा होती है, तथा इस्लाम की आधारभूत, रसूल के परिवारजनो से प्रेम पर है जिसके पास लज्जा नहीं उसे रसूल के परिवारजनों से प्रेम का भी कोई लगाव नहीं।

इमाम रज़ा (अ0) जब सुनते थे कि आपके चाहने वालों में से किसी ने मदिरा का सेवन किया है, तो आपका मुखमण्डल ग्लानिजल से तर हो जाता था। आप जानते थे कि मधपों (शराबियों) की ओर इमामत का सम्बन्धीकरण संसार की

दृष्टि में अति अपमान का घोतक है तथा कल लोग कह सकते है (भगवान न करे) आप मघपों की इमाम हैं।

पैग़म्बरे इस्लाम (स0) ने एक व्यक्ति को जनसमूह में स्नान करते देखा तो कहा कि ईश्वर अपने सेवको हेतु लज्जा तथा स्वाभिमान को प्रिय रखता है अतः जिसे अवगाहन करना हो वह संगोपन के साथ स्नान करे, घोषणा की कोई आवश्यकता नहीं है। लज्जा इस्लाम का अलंकार है। स्पष्ट है पुरूष को पुरूषों के समूह मध्य अवगाहन कोई धर्म शास्त्र के विपरीत कार्य नहीं किन्तु हज़रत ने इस कार्य पर टोक दिया ताकि परम्परा आगे न बढ़ने पाए। ऐसा न हो कि आज स्नान किया है कल अन्य व्यवहार समपन्न हों तथा इस प्रकार समाज निर्लज्यता का आखेट हो जाए फिर इसके अतिरिक्त इस प्रकार का नवीन वंशज पर अनुचित प्रभाव पड़ सकता है अस्तु इस पर भी संकोच आवश्यक है।

इमाम जाफ़र सादिक़ (अ0) का कथन है कि ऐ मुफ़ज़्ज़ल वह एक गुण जिसके कारण भगवान ने मनुष्य को समस्त पशुओं से प्रमुख तथा विशेष बनाया है वह लज्जा है। लज्जा न होती तो न कोई अतिथि रोक सकता, न प्रण पूर्ण करता, न आवश्यकताओं पर विचार किया जाता, न गुणों की खोज होती, न अवगुणों से संयम होता कितने अनिवार्य ऐसे हैं जो मात्र लज्जावश सम्पादित किये जाते हैं। लज्जा न होती तो बहुधा व्यक्ति माता पिता के अधिकार, दया प्रतिफ़ल, धरोहर वापसी, तथा सतीत्व का ध्यान भी न करते।

इमाम से उत्तम मनुष्य की प्रवृत्ति से कौन परिचित हो सकता है। आप अवगत हैं कि मनुष्य के बहुधा कार्य संसार के मोह के आधार पर समन्न होते हैं उनमें व्यवहारिक शुध्द हृदयता कम होती है तथा संसार का ध्यान व पक्षपात अधिक। इसी कारण आप का कथन है कि भगवान ने अंतिम तर्क हेतु कर्म का अति उत्तम प्रेरक स्वयं मनुष्य की प्रवृत्ति में अप्रित कर दिया है इसी लज्जावश मनुष्य अतिथि को अपने घर में स्थान देता है अन्यथा अतिथि का कहीं ठिकाना न होता। अतिथि कितना ही निकटतम एवं प्रिय क्यों हो इसमें कोई सन्देह नहीं है कि उसके कारण मनुष्य की नित्य की परिपाटी में अन्तर पड़ जाता है उसका जीवन किसी सीमा तक प्रतिबन्धित हो जाता है उसकी आपबध्दता में बढ़ोत्तरी हो जाती है तथा यही दशा प्रण पूर्ती की है, प्रण कर लेना तो सहज होता है, तथा उसका पूर्ण करना कठिन होता है इसका एक मुख्य कारण यह भी है कि प्रण करने एवं प्रण पूर्ती करने की परिस्थितियों में बड़ा अन्तर होता है। आप आज किसी से प्रण करते हैं कि एक मास पश्चात अमुक तिथि को उसके घर जाएगा। इस समय आप स्वस्थ तथा सुरक्षित है, घर के सदस्य स्वस्थ है, आर्थिक स्थिती अनुकूल है, शासन में क्रान्ति को कोई लक्षण नहीं है, कोई दुर्घटना भी सम्भावित नहीं है किन्तु एक मास पश्चात जब प्रण के पूरा करने का समय आता है तो स्वास्थय भी विकृत्त हो सकता है, घर भी अस्पताल के रूप में परिवर्तित हो सकता है, आर्थिक दशा भी विकृत्त हो सकती है, शासन में भी क्रान्ति उत्पन्न हो सकती है, दुर्घटनाये भी

निरन्तर विधमान हो सकती है। ऐसी परिस्थितियों में प्रण पूर्ण करने की कोई सम्भावना नहीं है। प्रकृति में लज्जा का भाव न होता तो वह भावना मनुष्य को इस बात की ओर आकर्षित न करती कि दुख एवं कठिनाईयाँ अपने स्थान पर है किन्तु एक प्रण लेने वाले से मिलन की भी सम्भावना है, तो प्रतिपूर्ति की कोई सम्भावना न थी। उपकार का ध्यान तथा निकृष्टता तिरस्कार भी बहुधा इसी एक भावना के फलस्वरूप होता है किसी बड़े समूह में जब कोई भिक्षुक आ जाता है तथा लोगों के हाथ उसकी तरफ़ बढ़ने लगते हैं तो कितने ऐसे व्यक्ति होते हैं जो मात्र शीलवश कुछ न कुछ दे देते हैं। यही दशा सामूहिक अनुदान की भी होती है, इसमें भी बड़े से बड़े अनुदान सादाधरणतया उसी लज्जा तथा स्वाभिमान की भावना का परिणाम होता है। पूँजीपति के मन में तुरन्त यह भावना उत्पन्न हो जाती है कि यदि सबके समान ही अनुदान दूँगा तो लोग मुझे क्या कहेंगे इसी कारण वह धनराशि बढ़ाने पर विवश हो जाता है।

माता पिता के अधिकारों, दयालुता का व्यवहार, धरोहर को लौटाने में भी लज्जा की कार्यसिध्दि स्पष्ट व प्रत्यक्ष है। आप ने असंख्य ऐसे बालक देखें होंगे जो युवा अवस्था में व चाकरी प्राप्ती होने के उपरान्त माता पिता, निकट सम्बन्धी नातेदारों की ओर से अचेतना दर्शाते है परन्तु उसके पश्चात उनके सम्मुख भी नहीं जाना चाहते।

प्रशन यह है कि सामना न करने का कारण क्या है ? स्पष्ट है कि यह उसी प्रकृतिक लज्जा के फ़लस्वरूप है जो ऐसे अवसर पर सम्मुख होने से रोकती है तथा इसका प्रभाव यह होता है कि सामना हो जाने के उपरान्त कुछ न कुछ अधिकारों का पक्ष करना ही पड़ता है।

धरोहर लौटाने का प्रसंग और भी मृदुल है कि धरोहर पर साधारणतया कोई साक्षी भी नहीं होता वह यदि न लौटाई जाए तो कोई पकड़ भी नहीं हो सकती परन्तु इसके विपरीत भी धरोहर लौटाई जाती है तथा इसका कारण मात्र यही लज्जा की भावना होती है।

सतीत्व का लज्जा से सम्बन्ध तो पूर्णतया स्पष्ट है। सतीत्व का संरक्षण साधारणत्या लज्जा ही के आधार पर होता है भगवान के आदेशों व कर्तव्यों के आधार पर सतीत्व की रक्षा करने वाले दो ही चार प्रतिशत होते हैं। लज्जा चूँकि विपरीत भावना है इसलिये जिसमें जितनी लज्जा होगी उसका वैसा ही सतीत्व भी होगा, लज्जा पूर्ण होगी तो सतीत्व भी सिध्द होगी, लज्जा त्रुटिपूर्ण होगी तो सतीत्व दोष पूर्ण होना भी अपरिहार्य है।

वर्तमान युग में सतीत्व का आभाव इसी लज्जा के अभाव के फ़लस्वरूप है तथा लज्जा का अभाव धर्म के अभाव का परिणाम है जैसा कि कथनों में वर्णित है।

संसार के बहुधा अपराध तथा यौन विषयक पथभ्रष्टता साधारणत्या गुप्त रूप से इसी कारण होती है कि प्रकृतिक लज्जा हज़ार बिगड़ने के पश्चात समाज के

सम्मुख ऐसे प्रदर्शन करने से रोकती है । हाँ जब समाज ही शनैः शनैः दूषित होने लगता है तो लज्जा का भाव भी दुर्बल हो जाता है। लज्जा भाव की उग्रता की दशा में घर की ओर से अपरिचित व्यक्ति का गमन भी दुष्कर होता है तथा लज्जा के क्षीण होने के उपरान्त युवती कन्या विश्वविधालय में युवक छात्रों के घेरे में छोड़ दी जाती है।

लज्जा की तीव्रतावश वैध योनिक सम्बन्ध गुप्त रूप से स्थापित किये जाते हैं तथा लज्जा विहीन होने की दशा में सिनेमाहाल में युवती पुत्री को साथ बैठा कर चुम्बन के दृष्य दिखाए जाते हैं।

लज्जा जीवित होती है तो अन्य की बहन बेटी के दृष्टिकोचित करने का साहस नहीं होता। लज्जा की मृत्यु हो जाती तो अपनी बहन बेटी का हाथ अपरिचित पुरूष के हाथ में देकर कहा जाता है "इट इज़ माई सिस्टर इट इज़ माई डौटर" यह मेरी बहन है, यह मैंरी पुत्री है। लज्जा शेष है तो दृष्टि भी गोपनीय रूप से डाली जाती है तथा लज्जा समाप्ति की दशा में पाशर्व में हाथ देकर सड़कों एवं पार्कों में बिहार किया जाता है।

वर्तमान युग के निर्लज्ज व स्वाभिमान रहित मनुष्य ने जब यह देख लिया कि अब लज्जा की रक्षा असम्भव है तो उसने सतीत्व व मर्यादा के ध्यान ही समाप्त कर दिये तथा इस प्रकार की समस्त भावनाओं को पूँजीवाद तथा कल्याण का फ़ल निश्चित कर लिया। ऐसे व्यक्तियों की दृष्टि में माता, बहन, पुत्री को अपरिचित

व्यक्ति से सुरक्षित रखना पूँजीवाद कार्य प्रणाली है और खुलेआम सौन्दर्य प्रर्दशन कराने में उन्नति है।

पारीग्रहण की आबध्दता पुरातन प्रथा है तथा लम्पटता व व्यभिचार नवीनतम प्रगतिशीलता है। कन्या को घर में बैठा कर उसके प्रतीष्ठा व मर्यादा का संरक्ष पुरातन कर्म है तथा उसे हाथों हाथ फ़िराना आधावधिक नवीन जीवन पध्दति है।

प्राकृतिक लज्जा व प्राकृतिक स्वाभिमान के साथ प्राकृतिक नोदनों के समझाने हेतु भी धर्माविधान के नियम का सृजन हुआ कि बहुधा समय मनुष्य अपने प्राकृतिक नोदन से भी अचेत हो जाता है तथा उसे इस बात की भी आवश्यकता पड़ती है कि कोई इन नोदन की ओर आकर्षित करे। बालक को दूध पिलाना प्रत्येक स्त्री जानती है किन्तु जब इस मामता से अचेतना व्यक्त करती है तो बालक अपने रूदन द्वारा उसे आकर्षित करता है। जन साधारण की आवश्यकता से प्रत्येक शासन भिन्न है किन्तु जब शिथिलता दर्शाई जाती है तो जनता को सत्याग्रह करना पड़ता है। यही आवश्यकता धर्माविधान की है। प्रकृतिक लज्जा प्रत्येक के पास है, लज्जा के नोदन सबके यहा उपलब्ध हैं किन्तु यदा कदा इस नोदन के चिन्ह सपष्ट हो जाते तो नियम का कर्तव्य हो जाता है कि इन चिन्हों को उभार कर नोदन को उजागर करे। इस्लामी धर्माविधान ने इन्हीं नोदन को समझाने हेतु निम्न नियम निर्मित किये हैः-

(आप ये किताब अलहसनैन इस्लामी नैटवर्क पर पढ़ रहे है।)

## 1.दृष्टि स्वाभिमान

साधारणतया यह विचार किया जाता है कि स्त्री की सतीत मर्यादा, सम्मान और प्रतिष्ठा का अर्थ मात्र यह है कि वह अपरिचित पुरूषों से दूर रहें तथा उनसे कोई यौनीक सम्बन्ध न उत्पन्न होने पाए परन्तु इस्लाम ने अपने धर्माविधान द्वारा इस बात का स्पष्टी करण कर दिया है कि मर्यादा का नोदन मात्र इतना ही नहीं वरन् इस से कुछ उच्चतर है। सतीत्व को प्रभावित करने वाली वस्तु मात्र यही नहीं कि स्त्री से यौनिक सम्बन्ध स्थापित हो जाएं बल्कि नारी का इस स्थिति में होना कि उस पर किसी अपरिचित पुरूषों की दृष्टि पड़ सके, यह भी उसके सतीत को घायल कर देता है। स्वंय उसका अपरिचित पुरूष पर दृष्टि डालना भी उसके सतीत्व व पवित्राता हेतु एक स्थाई जाल है जैसा कि इस्लामी पुरातन कथाओं में सपष्ट होता है।

ईश्वर ने अति तीव्र प्रकोप उस एक स्त्री पर अवतीर्ण किया जिसने अपने पति देव के अतिरिक्त अन्य पुरूष पर एक भरपूर दृष्टि डाल ली थी।

दृष्टि दानव के बाणों में से एक विषक्त बांण है। अनेको दृष्टियाँ अंतिम रूप में संताप का कारण हो जाती है।

दृष्टि नीचे रखने से उत्तम कोई सतीत्व का माध्यम नहीं दृष्टि का नीचा होना हृदय में महानता तथा तेज प्रत्यक्ष दर्शन के उपरान्त ही उत्पन्न हो सकता है।

"दृष्टि से बचों- दृष्टि हृदय में काम वासना उत्पन्न करती है तथा कामवासना पाखण्डों की जड़ है।"

उपरोक्त वर्णित पुरातन कथनों से अति स्पष्ट है कि दृष्टि का मर्यादा से घनिष्ट सम्बन्ध है। पराई स्त्री पर दृष्टि डालना मानो उसे विषाक्त (ज़हर आलूदा) बाण से आहत करना है तथा जब पुरूष की दृष्टि में इतना विष होता है तो स्त्री की दृष्टि कितनी गरलित होगी ? पुरूष प्रकृति में तो इतनी लज्जा भी नहीं है जितनी लज्जा व स्वाभीमान स्त्री प्रवृत्ति में रखा गया है।

"दृष्टि काम वासना का आधार है" इस वास्तविकता में संदेह नहीं किया जा सकता दृष्टि हृदय में कोई न कोई प्रभाव अवश्य छोड़ जाती है तथा वह प्रभाव आगे बढ़ते बढ़ते एक बड़ी विपत्ति का कारण बन जाता है। इसका अर्थ इस प्रकार समझना चाहिये उपद्रव मात्र यौन सम्बन्धी पथ भ्रष्टा का नाम है कि इस पर यह आपत्ति प्रकट जाए कि मनुष्य बहुधा रास्ता चलते साधारणतया उनकों छवि को दृष्टिगोचर करते हुए उन्हें देख कर आगे बढ़ जाता है न कोई उपद्रव उत्पन्न होता है तथा न किसी पथभ्रष्टता का ध्यान विधमान होता है। उपद्रव की परिधि इस से अधिक विस्तृत है इसमें एकान्त की वह समस्त विनष्टता भी सम्मिलित है जो मनो कामना के आवेग तथा उसकी सनतुष्टि के माध्यम के अभाव की दशा में

हुआ करती है। मान लीजिये कि रास्ता चलते समय आपने किसी स्त्री पर डाली, आप अन्य तथा वह अन्य मार्ग पर चली गई ऐसी दशा में तो किसी यौन सम्बन्धी कुर्कम का तो प्रशन ही नहीं उठता, किन्तु यह सम्भावना अवश्य है कि हृदय में बैठा या नेत्रों में चित्रित चित्र निर्जनता में किसी ऐसे कर्म पर उधत करे जो मनुष्य हेतु अति हानिकारक तथा स्वस्थ हेतु भी बड़ा अहितकर हो। जैसा कि पैग़म्बरे इस्लाम (अ0) ने अंतिम हज के अवसर पर फ़ज़ल बिन अब्बास से कहा था जब एक महिला हुज़ूर से प्रशन ज्ञात करने हेतु उपस्तिथ हुई और फ़ज़्ल ने उसके रूप व सौन्दर्य को दृष्टिगोचित करना आरम्भ किया तथा उसने भी फ़ज़्ल पर दृष्टि केन्द्रीत कर दी हज़रत ने फ़ज़्ल के मुख मंडल को यह कह कर फिरा दिया कि " युवक पुरूष तथा युवती " मुझे यह भय है कि कहीं मध्य में दानव न आ जाए।"

दृष्टि के परिणाम में उपद्रव की यही आशंका थी जिसके आधार पर इस्लाम ने अपनी स्त्रियों को नास्तिकों की महिलाओं से भी परदा करने के आदेश दे दिये थे कि कहीं ऐसा न हो कि वह महिलाऐं मुस्लिम समाज की स्त्रियों की सुन्दरता से प्रभावित होकर उसकी व्याख्या अपने पुरूषों से करें तथा उनके हृदय में उत्पन्न होने वाली लालसा किसी बृहत विपत्तिका आधार बन जाए। इस्लाम की यही सतर्क दर्शन शास्त्रिक जीवन था जो मुसलमान स्त्री एवं पुरूष सतीत्व व पवित्रता को गर्वात्मक स्तर तक ले गया कि जब स्त्री मात्र अपनी ओर दृष्टि करने से नहीं

घबराती थी बल्कि स्वयं भी दूसरे पर दृष्टि डालने से संयम करती थी किन्तु पश्चिम की धृष्टा मनुष्य को इस पतन की सीमा तक ले गई जहाँ वस्त्र सबके शवेत हो गये तथा हृदय काले व अदीप्तमान हो गये।

स्पष्ट बात यह है कि जिस विधान ने दृष्टि को लज्जा तथा स्वाभिमान तथा सम्मान व मर्यादा के विरूध्द समझा हो वह कब यह सहन कर सकता है कि किसी स्त्री का शरीर अपरिचीत पुरूष के शरीर से किसी प्रकार का समन्वय स्थापित करे। वर्तमान युग में अपरिचित पुरूष के साथ हाथ मिलाना कोई दोष नहीं है जबकि इस्लाम ने स्पर्श के समस्त भेदों में मात्र हाथ मिलाने (मुसाफ़हे) के सम्मान पर अत्यधिक बल दिया तथा अपनी इस दूरदर्शिता का प्रमाण प्रस्तुत किया है कि एक समय में स्पर्श के समस्त भेद दूषित रहने के उपरान्त भी हाथ मिलाना (मुसाफ़ेहा) को इस से मुक्त मान लिया गया है।

अन्य तर्क का भी समाधान यह निकाला कि व्यभिचार को अंग तथा अवयव पर विभाजित कर दिया जाए तथा नैतिक संसार के प्रत्येक अपराध को व्यभिचार का एक स्तर निर्धारित किया जाए अस्तु उसने घोषणा कर दी कि नामहरम स्त्री (ऐसी स्त्री जिस से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हो सकता है) पर दृष्टि करना नेत्रों का व्यभिचार है, उसका स्पर्श हाथों का व्यभिचार, उसकी ओर अशुध्द भाव से बढ़ना पगों का व्यभिचार है, उसके सम्बन्ध में भ्रष्ट विचार स्थापित करना मस्तिष्क की अशुध्दयता है तथा यह सब इस कारण किया गया है कि भूमिका पर प्रतिबन्ध

लगाए बिना मूल प्रसंग को नहीं रोका जा सकता। व्यभिचार एक काम नात्मक प्रसंग है तथा अभिलाषा की उग्रता पर प्रतिबन्ध लगाना साधारण मनुष्य के बस की बात नहीं, उचित यही है कि इसे प्रथम स्तर से ही रोक तथा जलकण को जलप्लावन न होने दिया जाए।

## आवरण आदेश

सम्मान व मर्यादा के चारों ओर लज्जा व स्वाभिमान और धर्माविधानिक आदेशों के प्रहरी नियुक्त करने के उपरान्त आवरण (पर्दे) का आदेश आता है यह आदेश सम्मान व मर्यादा की भावना की पूर्ति का अंतिम सूत्र है। इसके द्वारा मर्यादा विगठन के समस्त तत्वों से बचाया जा सकता है इसे ढ़ाल मान कर मर्यादा पर होने वाले प्रत्येक प्रहार को रद्द किया जा सकता है।

वर्तमान युग की बढ़ती हुई आवरणता न लज्जा देश को ही नहीं समाप्त किया बल्कि इस विषय का भी आभास किया है कि आवरण मनुष्य के स्वाभिमान का घोतक है अतः उसने लज्जा तथा स्वाभिमान के विचार को भी परिवर्तित कर डाला है अब न लज्जा न नाम की कोई वस्तु है और न ही मर्यादा नामी कोई वस्तु, अब प्रत्येक स्त्री प्रत्येक पुरूष हेतु ग्राहय है तथा प्रत्येक मर्यादा का खुले आम लुटना सामाजिक उन्नति है। व्यभिचार इस प्रकार का अपराध है जैसे सड़क पर खड़े

होकर मूतना। दृष्टि तथा स्पर्शन रीत के आवश्यक अंग तथा प्रगतिवाद के स्पष्ट लक्षण हैं।

इस्लाम जहाँ संसार के उग्रवाद से टकराता रहा वहीं इस (संकट) वन्या का भी कोई ध्यान न किया वरन् ऐसे युग में तथा प्रत्येक युग में पर्दे के आदेश को अखन्डनीय बनाये रखा, उसकी दृष्टि में सम्मान तथा मर्यादा का आदर, वह उसके विनाश तथा समाप्ति को नहीं देख सकता। उसने एक स्त्री के सम्मान हेतु पुरूष की दृष्टि को रोका। गुंजार स्वर पर प्रतिबन्ध लगाया स्त्री के हाथ मिलाने को वर्जित किया। मुताह (अल्पकालिक विवाह) का द्वार खोला, व्यभिचार के स्वाभिमान की परिधि को बृहत किया वह यह किस प्रकार सहन कर सकता है यही स्त्री खुलेबाज़ार अपमानित हो तथा उसकी महिमा तथा महानता को बाज़ारी योनि (जिन्स) का स्थान दे दिया जाए, यह गृह शोभा के स्थान पर खुले बाज़ार प्रेक्षा बन जाए।

क़ुराने मजीद ने परदे का आदेश सुनाते हुए उसकी तत्वेत्ता पर प्रकाश डाल दिया है तथा ये स्पष्ट कर दिया है कि परदे का सम्बन्ध लज्जा व मर्यादा के साथ कितना तीव्र है कथन है कि "पैग़म्बर धर्म वादियों से कह दो कि अपनी दृष्टि नीची रखें तथा अपने सतीत्व की रक्षा करें यही उनके लिये सबसे अधिक पवित्र बात है भगवान उनके कर्म से भली भाँति परिचित है और ऐ पैग़म्बर आस्तिक स्त्रीयों से भी कह दो कि अपनी दृष्टि नीची रखें अपने सतीत्व की सुरक्षा करें और

अपने उन अलंकार के अतिरिक्त जो स्वतः स्पष्ट हैं किसी श्रंगार को स्पष्ट न करें तथा अपनी ओढ़नी को अपने वक्ष पर डालें रहें और अपने श्रंगार को किसी एक पर प्रकट न करें, पति, बाप दादा, अपनी संतान अपने भाई भतीजे और भाँजे अपनी स्त्रीयों अपने अनुचर व अनुचरियों और वह अनुचर जो मनोकामनाओं के स्थिति से निकल चुकें हों, वह बालक जो स्त्री पुरूष के भेद का ज्ञान नहीं रखतें के अतिरिक्त, पाँव इस तरह पटख़ कर न चलें कि गुप्त अलंकार का किसी को आभास हो जाए अस्तिकों सब मिलकर भगवान के सभा स्थल में क्षमा याचना करों सम्भवतः इस प्रकार मोक्ष मिल जाए। दूसरे स्थान पर पैग़म्बर की पत्नियों से सम्बोधन होता है" पैग़म्बर की स्त्रीयों तुम साधारण स्त्रीयों जैसी नहीं हो तुम्हारा स्थान उनसे श्रेष्ठ है प्रतिबन्धित ये है कि तुम आत्मनिग्रह और संयम को स्वीकार करे रहो देखो तुम्हारी वार्ता में इस प्रकार लगावट नहीं होनी चाहिये जिससे कोई दुराचारी तुम्हारे विषय में लालसा व्यक्त करे तुम सीधी तथा सदाचार की वार्ता किया करो। तुम घरों में बैठी रहो और अगली मूर्खता का बनाव श्रंगार न करो नमाज़ का स्थायित्व करो ज़कात (धार्मिक दान) का भुगतान करो और भगवान और रसूल का अनुकरण करो उपरोक्त वर्णित आयतों से निम्नलिखित परिणा उद्‌वित किये जा सकते हैः-

१. आस्तिक पुरूष हो या स्त्री उनका धार्मिक कर्तव्य है कि हर समय अपनी दृष्टि नीची रखें अपरिचित पर दृष्टि डालने और ताँक झाँक का प्रयास न करें कि

ये धार्मिक कार्य नहीं है, ये साधारण बाज़ारू व्यक्तियों का कर्तव्य है जो आस्तिकों को शोभा नहीं देता। आस्तिकों को ये भी ध्यान रखना चाहिये कि जिस प्रकार आप दूसरे की बहन व पूत्री को ताक सकते है उसी प्रकार अन्य भी मनुष्य हैं उसके हृदय में भी मनोकामनाऐं हैं वह भी आपकी पुत्री तथा बहन की ताक में रह सकता है अतः न्याय नोदन यही है कि प्रत्येक अपनी दृष्टि नीची रखे तथा एक दूसरे के सम्मान व मर्यादा की सुरक्षा करें आयत ने वर्णत आदेश को मात्र पुरूषों से सम्बन्धित नहीं किया वरन् स्त्रियों को भी सम्मिलित कर लिया इस प्रकार के अगर स्त्री पुरूष को ताकने का अधिकार रखती है तो इसके प्रतिशोध भावना की प्रतिक्रिया ये होगी कि पुरूष भी इसकी ताक में रहने लगे और स्पष्ट है कि इस ताक झाँक से पुरूष की वह हानि नहीं हो सकती जो स्त्री के लिये सम्भव एवं प्रकट होने योग्य है।

२. आस्तिकों का दूसरा कर्तव्य ये है कि अपने सतीत्व की सुरक्षा करें, सतीत्व स्थान की सुरक्षा का मात्र यह अर्थ नहीं कि स्त्रियाँ पुरूष किसी के लिये कर्म अवस्थित न हों वरन् यदा कदा कार्य करना ही इस सुरक्षा के विपरीत हो जाती है, व्यभिचारी पुरूष मात्र स्त्री के सतीत्व को नष्ट नहीं करता बल्कि अपने सतीत्व को भी मिट्टी में मिला देता है, अतः सतीत्व सुरक्षा का तात्पर्य था कि संतानोत्पत्ति के अंग का प्रयोग अवैध अवसर पर नहीं और जब ऐसा घटित हो तो मानों सतीत्व व पवित्रता सुरक्षित नहीं रही, यही दशा स्त्री की कार्य करता , स्त्री जब अन्य स्त्री के

साथ सहचरता करती है मात्र दूसरी स्त्री के शरीर पर आक्रमण नहीं करती वरन् अपने सतीत का भी रक्तपात करती है सतीत्व सुरक्षा को इस्लाम ने उत्कृष्टता पवित्रता से सम्बोधित किया है तथा यह स्पष्ट बात है कि सतीत स्थान की सुरक्षा और कुदृष्टि से संयम से उत्तम पवित्रता का कोई तत्वाधान नहीं हो सकता।

३. स्वतः स्पष्ट हो जाने वाले श्रंगार प्रत्येक दशा में इस्लामी दर्शन शास्त्रीयों में तीव्र विभेद पाए जाते हैं, कुछ ने इस से तात्पर्य वस्त्र लिया है जो प्रत्येक दशा में स्पष्ट रहता है तथा जिसे किसी दशा में भी नहीं छुपाया जा सकता तथा कुछ कथनों में इसकी विवेचना सुरमा, कंगन आदि से की गई है जिसका अर्थ यह है कि स्त्री पर नेत्रों व हाथों का छुपाना मान्य नहीं है, यह तथ्य यधापि कि धर्माविधानिक स्वभाव से अत्यन्त दूर नहीं है इस कारण इसका ने छिपाना और है तथा पुरूष की दृष्टि का मान्य होना- तथा हज के अवसर पर अहराम (हज के अवसर का विशेष वस्त्र) ग्रहण के पश्चात स्त्री के लिये आवरण का प्रयोग निशध्द ठहराया गया है, इसके अतिरिक्त आवरण मुखड़े से दूर रहे तथा मुखमंडल को छू न जाए, जबकि हज में हज के अवसर पर लाखों मुसलमानों का समूह होता है तथा हर विचार धारा के मनुष्य एकत्र होते हैं, किन्तु इसके अतिरिक्त यह बात मात्र वहीं कही जाती है जहाँ इसके प्रदर्शन से किसी प्रकार के उपद्रव भय न हो अन्यथा उपद्रव की आशंका की दशा में तो शरीर के किसी अंग का स्पष्ट होना वैध नहीं हो सकता जैसा कि साधारणतया युवतियों में होता है कि प्रदर्शन किसी न

किसी उपद्रव की पृष्ठभूमि बन सकता है। आयत के इस अंश के विषय में एक धारणा यह भी है कि यह अंश दो बार प्रयोग हुआ है, एक बार मूल आदेश के औचित्य की विवेचना के सम्बन्ध में तथा द्वितीय बार उन लोगों की विवेचना के सम्बन्ध में जिन पर इस श्रंगार को प्रदर्शित किया जा सकता है कि स्पष्ट रूप से अलंकार का प्रदर्शन मान्य है किन्तु प्रत्येक व्यक्ति हेतु नहीं वरन् उन्हीं व्यक्तियों हेतु जिनका उल्लेख आयत में उपलब्ध है।

४. ओढ़नियों को वक्ष पर डाले रखने का आदेश स्पष्ट करता है कि इस्लाम में स्त्री का परदा मात्र तव्ता का परदा नहीं है अन्यथा कुर्ता ही शरीर व त्वचा के छिपाए रखने के लिये पर्याप्त नहीं है। वक्ष पर ओढ़नी डाले रखने की कोई आवश्यकता नहीं थी यहाँ त्वचा के साथ शरीर की बनावट तथा उसके उतार चढ़ाव का छिपाना भी आवश्यक है। ओढ़नी का सबसे उत्तम लाभ यही है कि शरीर की बनावट का अनुमान नहीं होता, ओढ़नी के वक्ष पर अनुपस्थिति के दशा में शरीर की बनावट एक विशेष सीमा तक स्पष्ट रहती है तथा ऐसी स्थिती में स्त्री को आवरण रहित नहीं कहा जा सकता। इस्लाम ने इस बिन्दु को दृष्टिगत रखते हुए ओढ़नी की आग्रह की तथा उसे केवल सिर क सीमित नहीं किया बल्कि वक्ष पर भी डाले रखने के आदेश दिये।

५. पग पटक कर चलने के वर्जित करने से यह स्पष्ट है कि इस्लाम सम्मान तथा मर्यादा की सुरक्षा का महान नेता है वह यह भी सहन नहीं करता कि किसी

व्यक्ति को स्त्री के गुप्त अलंकार का आभास हो सके। स्पष्ट है कि श्रृंगार शरीर का कोई भाग नहीं है बल्कि वह अतिरिक्त वस्तु है जिसका प्रयोग पृथक से होता है किन्तु इस्लाम को यह स्वीकार नहीं कि ऐसी वस्तु का भी किसी अपरिचित को अनुमान हो पाए। स्पष्ट है कि जो धर्म अतिरिक्त वस्तु के प्रदर्शन तथा तथा उसके प्रकटीकरण को प्रिय नहीं करता वह शरीर के किसी अंग के प्रदर्शन की क्यों कर इच्छा करेगा।

अंतिम कथन में पश्चाताप का आमंत्रण इस बिन्दु को स्पष्ट करता है कि मनुष्य को अपनी त्रुटि पर आग्रह न करना चाहिये तथा न यह कल्पना करनी चाहिये कि जब त्रुटि हो गई, अब उसकी क्षति पूर्ती से क्या लाभ ? पश्चाताप की प्रत्येक दशा में उपयोगीता है उसका ध्यान रखना प्रत्येक दशा में आवश्यक हे, पश्चाताप न करने वाला, तथा अपनी त्रुटि पर आग्रह करने वाला वास्तव में दोषी कहा जाता है, पश्चाताप करने वाला दोषियों की पंक्ति से परे हो जाता है। आयत का उद्दश्य यह है कि मुसलमान इस समय तक इन बातों पर ध्यान नहीं देते रहें हैं। उनके समाज में अशिष्ठता व निर्लज्जता ने स्थान बना लिया तो उन्हें इस अवस्था पर स्थिर नहीं रहना चाहिये तथा भगवान की दया दृष्टि से निराश न होना चाहिये बल्कि तुरन्त वर्तमान स्थिति को परिवर्तित कर भगवान के सभा स्थल में यह प्राथना करनी चाहिये कि वह इस दैवयोग को स्थिर व चिर रखे तथा हमारे चरित्र को इस्लामी सत्ता के साँचे में ढ़ाल दें।

सामूहिक पश्चाताप का नियंत्रण भी इस बात का प्रमाण है कि इस्लाम इस प्रसंग में केवल व्यक्तिगत सुधार नहीं चाहता वरन् समस्त समाज का सुधार चाहता है। उसका दृष्टिकोण यह है कि मुसलमान स्वतः भी लज्जा स्वाभिमान की रक्षा करे तथा अन्य को भी इस कार्य हेतु आमंत्रित करे ताकि समाज में निर्लज्जता सामान्य न होने पाए अन्यथा वह व्यक्तिगत सुधार के बावजूद यदि दो चार व्यक्ति भी नियमों का उलंघन करने वाले जीवित रह गये तो उपद्रव के उठने की तीव्र आशंका रहेगी। स्त्री के सौन्दर्य तथा सुन्दरता का पुरूष की इच्छाओं के साथ सह विचार हो जाता है तो उपद्रव की उत्पत्ति अपरिहार्य है।

दूसरी आयत में केवल पर्दे के आदेश को पर्याप्त होना नहीं माना गया वरन् घरों में बैठने हेतु भी आमंत्रित किया गया है स्पष्ट है कि जो इस्लाम पैग़म्बर (अ0) की पत्नियों को घरों से निकलना सहन नहीं कर सकता वह अन्य स्त्रीयों हेतु, यह किस प्रकार सहन कर सकता है जबकि उपद्रव का भय पैग़म्बर (अ0) की पत्नियों में कम है वह उम्मत की माताओं का स्थान रखती है, उनसे विवाह करना निशिध्द है उन पर लालसायुक्त दृष्टि पड़ने की सम्भावना कम है तथा उम्मत में वह सभी सम्भावनायें अत्यधिक पाई जाती है।

## पर्दे की सीमायें

आवरण तथा आवरण बिहीनता को पैनी दृष्टि से देखा जाए तो अनुमान होगा कि यह कोई विवादित प्रसंग नहीं है तथा संसार में कोई बुध्दि व अवचेतना वादी

ऐसा नहीं जो पर्दे का विरोधी हो तथा सम्पूर्ण आवरण हीनता का समर्थक हो, योरोप के निकृष्टतम वस्त्र विहीनों में अभिरूचि रखने वाले समाज में भी शरीर के कुछ अंगों का प्रदर्शन निशिध्द है तथा उन का छिपाना अनिवार्य है।

पर्दे के सम्बन्ध में समस्त विभेद उसकी निरूध्दता व सीमा में है कि शरीर के कुछ भागों का गुप्त रखना प्रत्येक रूप में अनिवार्य है तथा कुछ भागो का गुप्त रखना विरोधाभासात्मक है। लज्जा स्थानों (शर्म गाहों) का परदा प्रत्येक रूप से अनिवार्य है तथा यह पुरूष एंव स्त्री को गुप्त रखना आवश्यक नहीं है तथा स्त्री को समस्त शरीर एवं शरीर के साथ केश का छिपाना भी आवश्यक है।

समस्त मतभेद मुखमंडल के विषय में है, कि मुखड़े का गुप्त रखना अनिवार्य है अथवा नहीं ?

इस सम्बन्ध में कुछ बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

१. पर्दे से अभिप्राय शरीर के अंगों की गोपनीयता है वस्त्रों का प्रयोग करना नहीं इस कारण कि यदि कोई स्त्री लज्जात्मक अंगों तथा नाइलान का वस्त्र प्रयोग करती है तथा शरीर झलकता रहता है तो उसे पर्दा धारक नहीं कहा जा सकता भले उस वस्त्र का प्रयोग शरीर के केश छिपाने में ही क्यों न किया जाय।

२. पर्दे का प्रसंग विभिन्न देशों में ऐसे दमन का आखेट हो गया है कि उसकी यथोचित स्थिति स्वंय भी पर्दे में चली गई है तथा परस्पर दोषारोपण ने एक घृणात्मक अवस्था उत्पन्न कर दी है कुछ रूढ़वादियों का विचार है कि स्त्री को

सम्पूर्ण शरीर गोपनीय रखना चाहिये तथा इस कारण मुखड़े को भी गोपनीय रखना चाहिये, उसके शरीर की बनावट को भी गोपनीय होना चाहिये तथा उसके वस्त्र को भी छिपाना चाहिये यहाँ तक कि यदि कोई स्त्री समस्त शरीर को छिपा कर बिना मुखावरण के बाहर निकल आये तो उसे भी आवरण विहीन कहा जाता है। उन सज्जनों की दृष्टि में पर्दे से तात्पर्य मुखावरण है तथा बस ! जबकि इस्लाम में मुखावरण के आदेश नहीं हैं, पर्दे के आदेश हैं। वह शरीर के गोपन की याचना करता है। किसी विशेष रूप के वस्त्र की मांग नहीं करता, उसकी दृष्टि में साधारण मोटा कपड़ा वस्त्र है किन्तु नाइलान की बहुमूल्य साड़ी वस्त्र नहीं है जब तक कि उसके साथ शरीर को गोपनीय रखने का अन्य उपाय न किया जाए।

३. स्त्री के मुखड़े तथा शीर केश गोपनीय रखने का महत्व अधिक तथा उसकी अत्यधिक चेतावनी इस कारण दी गई है कि कुछ कथनों में शिर केश को दानव का जाल कहा गया है तथा यह बात बड़ी सीमा तक स्पष्ट है कि स्त्री जीवन में आकर्षण का अवलम्बन अधिकतम उसके शिर केश पर है, उसके श्रृंगार पर घन्टों का समय लगाया जाता है, उसका श्रृंगार कोर्स किया जाता है, उसके अलंकार की अंतिम काल के लक्षणों में गणना की जाती है तथा उसके अलंकार में कवियों की नाड़ियों से खींच खींच कर प्राण निकलने लगता है तथा यह सभी बातें मुखड़े में नहीं पाई जाती हैं। अतः उपद्रव की जो आशंका केशों के प्रदर्शन में है वह मुखमंडल के खुलने में नहीं है।

कुछ सज्जन अबोधता वश करबला की घटना में तर्कोपस्थिति करते हैं कि सैदानियों ने मुखड़े को शिर केश से छिपाया था जो इस बात का घोतक है कि मुखमंड़ल को छिपाने का महत्व अधिक है यधपि यह तर्क धर्मशास्त्रिक अभिरूची से बचने का परिणाम है अन्यथा मनुष्य धर्मशास्त्रिक स्वभाव का भारवाहक होता तो उसे यह ज्ञात होता कि महत्वपूर्ण तथा अमहत्वपूर्ण का निर्णय वहाँ होता है जहाँ दोनों ही आकृतिया सम्भव होती है।

करबला में केशों की गोपनीयता सम्भव नहीं थी क्योंकि चादरें छीनी जा चुकी थी। अब सैदानियों के स्वाभिमान की पूर्णता के फ़लस्वरूप यह निर्णय लिया कि कम से कम मुखडे ही का पर्दा कर लिया जाए ताकि नामहरमों की दृष्टि से सुरक्षित रहें। यह उनके सतीत्व के पूर्णता का लक्षण है। इस से धर्मशास्त्रिय कर्तव्यों पर विवेचना नहीं हो सकती। अन्यथा मासूमा ए आलम (स. अ.) ने तो काया आकार के पद दर्शन में भी अभिरूची न व्यक्त की जिसमें मृत्यु उपरान्त भी काया आकार का प्रदर्शन न हो सके।

4. स्त्री के मुखड़ा छिपाने या न छिपाने का प्रसंग केवल एक शरीर के अंग आवरण तथा अवरणहीनता का बन्दु नहीं वरन् एक जाति के सम्पूरण जीवन का प्रसंग है। स्त्री का मुखमंडल छिपाना अनिवार्य हो तो उसका अर्थ ये है कि वह कालेजों में शिक्षा नहीं ग्रहण कर सकती, कार्यालयों में सेवा नहीं कर सकती, वाहन नहीं चला सकती, सम्पूर्ण सुरक्षा में भाग नहीं ले सकती तथा जीवन के वह

समस्त कार्य जिनमें अपरिचित पुरूषों के सम्मुख मुखड़ा खोलना पड़े सम्पन्न नहीं कर सकती एवं मुखड़ा खोलने का औचित्य यह है कि समस्त कार्य वैध हों इस कारण वर्तमान युग के धर्मशास्त्रियों ने इस विषय पर विशेष ध्यान दिया है तथा इस्लाम के शत्रुओं ने भी इस्लाम के विरूध्द इस प्रसंग को अस्त्र के रूप में प्रयोग किया है कि इस्लामी देशों की आधी जनसंख्या को निलंबित कर देना चाहता है और स्त्री के अस्तीत्व को समाजी जीवन में पूर्णतया बेकार बना देना चाहता है।

पूर्व कथनों में जिन अलंकारों के स्वतः प्रकट होने की घोषणा की गई थी उनमें एक सुरमा भी था जिस से ज्ञात होता है कि मध्य इस्लाम में मुखड़ा खोलने की रीति इतनी सामन्य थी कि सुरमे की स्वतः श्रृंगार में गणना होती थी।

हज के आदेश तथा अन्य जीवन सम्बन्धी मामलों से इस बात का अनुमोदन होता है कि विभिन्न स्थानों पर मुखड़े के खोलने की अनुमति दी गई है तथा इसे शिर केश की श्रेणी में नहीं रखा गया है जिसका तात्पर्य यह है कि कर्तव्य की सीमा तक प्रत्येक मुसलमान स्त्री को शिर केश का परदा करना चाहिये तथा जीवन प्रसंग के आधार पर मुखड़ा खोलना चाहे तो खोल सकती है, हाँ इस बात का ध्यान रहे कि उसके इस कर्म से किसी उपद्रव तथा झगड़े की आशंका न हो अन्यथा फिर इसकी आज्ञा नहीं दी जा सकती जैसा कि आयतुल्ला ख़ुमैनी ने अपनी एक वकतव्य में कहा था "हम स्त्रियों की स्वतंत्रता विरोधी नहीं हैं विनाश के विरोधी हैं"

उन्हें जीवन के सम्पूर्ण अधिकार प्रदान करना चाहते हैं किन्तु पुरूषों के साथ सम्मिश्रित होकर समाज में कुरीति उत्पन्न करने की आज्ञा नहीं दे सकते।

प्रत्येक स्थिति में यह प्रसंग धर्मशास्त्रीयों के मध्य विरोधाभासात्मक है, प्रत्येक व्यक्ति को अपने शास्त्रवेत्ता के शास्त्रीय निर्णयानुसार पालन करना होगा किन्तु प्रत्यक्ष परिस्थितियों के आधार पर यदि स्त्रियों के मुखड़ा खोलने की अनुमती प्रदान की जाए तथा मात्र शरीर सहित शिर केश का पर्दा रखा जाए तथा पुरूषों को भी कुदृष्टिता की रीति से रोक दिया जाए तो जीवन की समस्याओं का समाधान हो सकता है तथा इस्लाम पर किसी प्रकार का आक्षेप नहीं लगाया जा सकता जैसा कि इस्लामी क्रान्ति के पश्चात से ईरान में हो रहा है तथा स्त्रियों को सतीत्व सुरक्षा के साथ प्रत्येक कार्यक्षेत्र में भाग लेने की अनुमति दी जा रही है यधपि हमारे देश में कुछ महापुरूषों का विचार यही है कि मुखड़ा खुल गया तो शेष ही क्या बचा, उनकी दृष्टि में पूरे शरीर का प्राण मुखड़ा है तथा समस्त पर्दा मुखड़े की गोपनीयता में है अन्य शरीर के अंगों का कोई महत्व नहीं है तथा न शिर केश की कोई महत्ता है।

उनका एक विचार यह भी है कि इस प्रकार की समस्याओं का प्रचार आवरणहीनता का प्रसार है तथा आवरण विहीनता का प्रचार इम्लामी स्वाभाव के विपरीत है।

उन सज्जनों से केवल यह विरोध करना है कि प्रथम तो यह आवरण रहित होने का प्रचार नहीं है, काल्पनिक पर्दे के विरूध्द एक ध्वनि है जिसे इस्लाम विरोधी नहीं कहा जा सकता था द्वितीय बात यह है कि इस प्रकार की विवेचना पुरातन युग में सम्भव थी जब समाज में समस्त शरीर का पर्दा प्रचलित था तथा मुखावरण भी साधारणतया प्रयोग किया जाता था उस समय यह बात कही जा सकती थी कि ऐसी समस्याओं की घोषणा से पर्दे में कमी हो जाएगी तथा नई समस्याऐं उत्पन्न हो जाऐगीं किन्तु जबकि आज विवशता के नाम पर स्कूलों, कालेजों, कार्यालयों, सेवाओं में पूर्ण रूपेण आवरण विहीनता सामान्य हो चुकी है, ऐसी समस्याओं की घोषणा करना आवरण विहीनता में कमी है पर्दे में कमी नहीं है जिस पर इतनी आपत्ति व्यक्त की जा रही है।

फिर इसके पश्चात यदि यही हट है कि इस प्रकार से आवरण विहीनता का प्रचार होता है तो स्मरण रहे कि वर्तमान युग के मुसलमानों के मन में वर्तमान प्रचलित पर्दे का प्रचार भी इस्लाम को अपयशता तथा स्त्रियों क  घृणक करने की प्रेरणा है तथा मुसलमान कार्यपालकों को इन समस्याओं पर पूर्णरूप से आकृष्ट होने के साथ दृष्टि रखने की आवश्यकता है।

धार्मिक समस्यायें ध्यानों व विचारों द्वारा नहीं तय हो सकती, उनका ग्रहण स्थान तथा अनुभूति शक्ति मासूमों (पापरहितों) के कथन है तथा जनसाधारण के लिये उनके शास्त्रवेत्ताओं की शास्त्रीय निर्णय है। शास्त्रीय विज्ञाता केश के पर्दे को

अनिवार्य मानते हैं तथा मुखड़े के पर्दे को सावधानितावश कहते हैं जिसे अन्य शास्त्रवेत्ता से प्रत्यागन सम्भावित है तथा उसके शास्त्रीय निर्णय का अनुसरण किया जा सकता है। यह विचार प्रत्येक दशा में आवश्यक है कि मुखड़े के खुलने से किसी उपद्रव व झगड़े की आशंका न हो तथा पुरूष भी अपनी दृष्टि पर नियंत्रण रखें तथा उसे पाप से ओत प्रोत न होने दें अन्यथा धार्मिक निर्णय की स्थिति परिवर्तित हो जाऐगी।

इस स्तर पर यह तथ्य भी विवेचना योग्य है कि इस्लाम उन्हीं स्त्रियों पर दृष्टि डालने को निशिध्द करता है जिनमें स्वंय अपने पर्दे एवं लज्जा का ध्यान हो अन्यथा प्रत्येक वह स्त्री जो समझाने के उपरान्त भी पर्दा न ग्रहण करे, उस पर दृष्टि कदापि निशिध्द नहीं है तथा न वह किसी सम्मान की पात्र है प्रतिबन्ध यह है कि अपनी दृष्टि में अनुचित भावना सम्मिलत न हो तथा वह आस्वदन वश न हो।

(आप ये किताब अलहसनैन इस्लामी नैटवर्क पर पढ़ रहे है।)

## पर्दा तथा आचरण

मासूमीन के जीवन चरित्र से पर्दे की सीमा पर विवेचना करने से पूर्व यह देखना आवश्यक है कि आचरण पर तर्कोपस्थिति की सीमायें तथा निरोधन क्या है ?

स्मरण रहे कि आचरण एक निस्तब्ध व मौन वास्तविकता है इससे तर्कोपस्थित स्थापित करने के पूर्व उसकी स्थिति को दृष्टिगत रखना आवश्यक है। स्थिति को

ज्ञात किये बिना आचरण का विवेचन एक निराधर बात होगी। उदाहरणार्थ अपने किसी मासूम (निष्पाप) को दो रकअत नमाज़ पढ़ते देखा तो स्पष्ट है कि इस से इतना तो आभास हो जाएगा कि इस समय दो रकअत नमाज पढ़ना उचित है किन्तु यह निर्णय लेना कि ये नमाज़ ऐछिक है या अनिवार्य, अनिवार्य है तो केवल मासूम (निष्पाप) हेतु अथवा अन्य व्यक्तियों के लिये भी इसलिये कि नमाज़ स्वतः एक मूक कर्म है, इसकी स्थिति ज्ञात करने हेतु धार्मिक अन्य नियमों पर दृष्टि डालनी होगी, यह देखा जाऐगा कि इस्लाम में अनिवार्य नमाज़ों की संख्या क्या है, मासूम की विशेषताओं की सीमा क्या है। यह नमाज़ अनिवार्य में है तथा न ही मासूम (निष्पाप) की विशेषताओं में तो इसका इच्छित होना एक विश्वस्नीय बात है। यही दशा अन्य आचरणों की है कि जब तक उनकी वस्तुस्थिति न ज्ञात हो जाए उस समय तक उसके विषय में कोई निर्णय सम्भव नहीं है।

आवश्यकता इस बात की है कि पर्दे के विषय में भी इस्लाम का उद्दश्य याद किया जाए ताकि उसके प्रकाश में आचरण की विवेचना हो सके। कुरआन तथा सुन्नत के बहुदा वर्णनो से इस ध्येय का विवेचन किया जा चुका है। इस समय मासूमा ए आलम जनाबे फ़ातिमा ज़हरा (स0) का एक वाक्य दृष्टिगत है जो आपने सरवरे कायनात (स0) के प्रशन पर कहा था। सरवरे कायनात (स0) का प्रशन यह था कि, स्त्री के लिये सबसे अच्छी वस्तु क्या है ? तथा मासूमा ए आलम (स0) का उत्तर यह था "कि स्त्री हेतु सबसे उत्तम यह है कि न उस पर

किसी पुरूष की दृष्टि पड़े तथा न वह किसी पुरूष को देखे" जिसका अभिप्राय ये है कि पर्दा एकीकृत गुप्तागं का नाम नहीं वरन् इसमें दोनों पक्षों की लज्जा व स्वाभिमान का हस्तक्षेप है। पर्दा मात्र घर में बैठने का नाम नहीं है बल्कि घर से बाहर निकलने के उपरान्त भी पुरूषों की दृष्टि से बचने का नाम है तथा घर पर रहकर भी नामहरम (जिन से पाणिग्रहण सम्भव हो) की दृष्टि से अपने को बचाए रखने का नाम है। स्त्री को नियमानुसार घर के भीतर रहकर घरेलू कार्य की समीक्षा करना चाहिये तथा यदि कदाचित आवश्यकतानुसार घर से निकल भी आय तो अपने को पुरूषों की दृष्टि से बचाए रखना चाहिये। यही कारण है कि इस्लाम ने पुरूष को स्त्री पर शासन का अधिकार इस अर्थ में दिया है कि वह स्त्री को घर से बाहर न जाने दे। घर के बाहर की नीतियों को स्त्री के सम्बन्ध में पुरूष अति उत्तम परिचित है तथा यदि इन परिस्थितियों से अवगत होते हुए भी बाहर जाने की आज्ञा देता है तो इसका अर्थ यह है कि उसकी लज्जा व स्वाभिमान समाप्त हो चुका है तथा स्पष्ट है कि जिसकी लज्जा का अन्त हो जाए उसका धर्म कहाँ शेष रहता है ?

मासूमा ए आलम के इस कथन के प्रकाश में आपके आचरण को भी देखा जाता है कि आपके द्वार पर सरवरे कायनात अपनी आदरणीय सहयोगी को लेकर आय तथा अन्दर आने की आज्ञा चाही, मासूमा ने अनुमति दे दी किन्तु आपने पुनः प्रशन किया तो मासूमा ने पुनः कहा कि घर आपका है अनुमति की क्या

आवश्यकता है ? आपने कहा कि मेरे साथ मेरा एक साहक भी है, जनाबे सैय्यदा (स0) ने उत्तर दिया कि आपको ज्ञात ही है कि मेरे पास एक ही चादर है जिससे या तो सिर को ढ़ाँक सकती हूँ या पैरों को ऐसी दशा में किसी सहवासी को घर के भीतर आने की अनुमती कैसे दे सकती हूँ। घटना से सम्पूर्ण स्पष्ट है कि मासूमा ए आलम सहवासी को घर के भीतर आने से नहीं रोकना चाहती बल्कि पर्दे की सीमाओं पर प्रकाश डालना चाहती हैं, अर्थात यदि मैंरे पास चादर होती तो अवश्य अनुमति दे देती और यही कारण है कि जब हज़रत नें अपनी एबा प्रदान कर दी तो जनाबे सय्यदा (स0) ने प्रसन्नतापूर्वक सहवासी को घर में प्रवेश करने की अनुमति दे दी।

मासूमा ए आलम के व्यक्तिगत आचरण की विवेचना की जाए तो ज्ञात होगा कि आप केवल शरीर के पर्दे की रक्षक नहीं थीं वरन् काया आकार के प्रकटन में भी अभिरूचि नहीं रखती थी जैसा कि प्रसिध्द है कि आपने जनाबे असमा से यह निन्दा की थी कि मदीने में शव उठाने की विधि त्रुटिपूर्ण है इससे मृतक का काया आकार दिखाई देता है तथा जब असमा ने हबश देश की विधि से शव ले जाने का बक्सा बना कर दिखा दिया तो आपके होठों पर मुस्कुराहट आ गई, कुछ कथनों में यह विधि मासूमा के स्वप्न का परिणाम बताया गया है।

स्पष्ट है कि आपकी अधीरता मृत के पश्चात हेतु थी जब मनुष्य प्रत्येक दुख तथा कर्तव्यच्युत हो जाता है किन्तु इस प्रकार की अधीरता स्वतः स्पष्ट है कि

आप मृत्यु के उपरान्त भी अपने काया आकार को स्पष्ट नहीं होने देना चाहती हैं तथा जो मृत्यु हो जाने के पश्चात भी इस बात की अभिरूचि न रखे वह जीवन काल में किस प्रकार इच्छा कर सकता है तथा कदाचित यही कारण था कि जब रसूले अकरम (स0) आपको मुबाहले (वाद विवाद) में सम्मिलित होने हेतु ले चले तो सबके आगे स्वयं थे तथा पीछे हज़रत अली (अ0) को कर दिया ताकि फ़ातिमा (स0) का आकार स्पष्ट न होने पाए तथा फ़ातिमा (स0) के पद चिन्हों पर किसी की दृष्टि न पड़ने पाए।

हज़रत फ़ातिमा ज़हरा (स0) की यही आत्म महत्ता जिसकी श्रेष्ठता का अनुमान इस घटना से भी होता है के रसूले अकरम इब्ने मकतूम नेत्रविहीन सहवासी को लेकर अपने घर में पधारे तथा आयशा एवं हब्सा से कहा कि कमरे में चली जाओ तो दोनों धर्मपत्नियों ने कहा कि यह तो नेत्रविहीन सहवासी है इससे पर्दा करने की क्या आवश्यकता है तो आपने कहा यह सत्य है कि वह नेत्रविहीन है किन्तु तुम लोग तो नेत्रविहीन नहीं हो इस्लाम जहाँ उसका दृष्टि करना उचित नहीं समझता वहाँ तुम्हारा दृष्टि डालना प्रिय नहीं समझता।

उपरोक्त वर्णित घटनाओं से प्रत्यक्ष स्पष्ट है कि स्त्री का वास्तविक गन्तव्य गृह सीमा तक है तथा उसका मूल अधिकार गृहकार्यों की रक्षा है इसके मुख कपोल को पुरूषों की दृष्टि से सुरक्षित रखने में कल्याण है तथा उसे काया आकार को अपरिचित व्यक्तियों की दृष्टि से सुरक्षित करने में शान्ति है। यही आचरण समाज

के सुधार की प्रति भू है तथा यही जीवन नियम सामाजिक कल्याण एवं लाभ का उत्तर दायी है। भगवान एकेश्वरवाद व रेसालत के अनुयाईयों तथा वेलायत प्रणाली में विश्वास रखने वालों को इस पुण्य के प्राप्त करने का दैवयोग प्रदान करे तथा हमारे समाज को प्रत्येक दंन्द तथा विपत्ति से सुरक्षित रखे। आमीन भगवान ऐसा ही करे।

(आप ये किताब अलहसनैन इस्लामी नैटवर्क पर पढ़ रहे है।)

महापवित्र ईश्वर के नाम से

## निर्णायक प्रयाण स्थूल

पर्दे के विरूध्द कोलाहल तथा पर्दे के असाध्य होने के प्रचार के अनेकों कारणों में से एक बृहत कारण यह है कि पर्दे का प्रसंग समाज में विभिन्न रूप से संदेहात्मक हो गया है तथा इसकी उचित स्थिति स्पष्ट नहीं रह गई है। वास्तिवकता के प्रकट न होने ही का परिणाम है कि असत्य को सन्देह का अवसर प्राप्त हो गया तथा प्रसंग इस्लाम के विरूध्द एक स्थाई शस्त्र बन गया। इन समस्त आशंकाओं की विवेचना निम्नवत प्रस्तुत की जा रही है जिनके फ़लस्वरूप प्रसंग अस्पष्ट हो गया है तथा उपद्रवकारों को उपद्रव का अवसर प्राप्त हो गया है।

## 1.आवरण या लज्जा

स्पष्ट रहे कि प्रदे का प्रसंग लज्जा व स्वाभिमान के प्रसंग से पूर्णतया भिन्न है यध्यपि पर्दे का एक आधार व स्वाभिमान भी है किन्तु दोनों की परिस्थितियाँ भिन्न भिन्न हैं तथा दोनों के नोदन भिन्न हैं। एक की अन्य पर कल्पना ही विभिन्न दुभावनाओं तथा भ्रन्तियों का कारण बन गया है तथा तथ्य स्पष्ट नहीं रह गया है।

पर्दे का अभियाचन मात्र स्त्री से किया गया है तथा लज्जा याचिका पुरूष तथा स्त्री दोनों ही से की गई है। वह स्त्री, स्त्री नहीं जो निर्लज्ज हो, तथा वह मर्द देत्य है, जिसके अस्तित्व से स्वाभिमान दूर हो जाए। इस्लाम में अपनी स्त्रीयों द्वारा धनोउपार्जन निकृष्टतम दोष ठहराया गया है तथा ऐसे व्यक्ति को असुर तथा अक्षम्य माना गया है कि यह व्यक्ति निर्लज्य है तथा इसने लज्जा का आंचल छोड़ दिया है।

अपनी स्त्री के साथ किसी को कुकर्म करते देख कर उसकी हत्या कर डालने का अधिकार इस्लाम की ओर से स्पष्ट घोषणा है कि इस्लाम लज्जा तथा स्वाभिमान का धर्म है तथा वह इस मार्ग में सर्वोत्तम छूट हेतु तत्पर है प्रतिबन्ध यह है कि अन्य प्रतिशोध भावनाओं सम्मिलित न हो तथा मनुष्य मात्र स्वाभिमान एवं लज्जावश ऐसा प्रयास करें।

लज्जा व स्वाभिमान को भी केवल सम्मान व मर्यादा के प्रसंग में प्रिय किया गया है अन्यथा धार्मिक समस्याओं की जानकारी प्राप्त करने तथा ज्ञात करने के मार्ग में लज्जा व स्वाभिमान बाधक हो जाए तो उसे निकृष्टतम गुण या विशेषता का निकृष्तम प्रयोग माना गया है कि इस्लाम ज्ञान व कृपा से उत्तम किसी वस्तु को नहीं समझता है तथा जो भावना ज्ञान व कृपा के मार्ग में अवरोध उत्पन्न करे वह किसी प्रकार से प्रशंसनीय नहीं हो सकती।

## 2.पर्दा एवं सतीत्व

पर्दा तथा सतीत्व व पवित्रचारिता भी दो भिन्न भिन्न प्रंसग हैं, पर्दे की याचना मात्र स्त्री से की गई है तथा सतीत्व याचना पुरूष स्त्री दोनों से की गई है यह हमारे समाज की मूर्खता है कि हमने सतीत्व को केवल स्त्रियों से सम्बध्द कर दिया है तथा पुरूष को इस मार्ग में स्वतन्त्र छोड़ दिया है, स्त्री कुकर्म करे तो उसका सतीत्व समाप्त हो गया तथा मर्द हज़ार बार व्यभिचार करे तो उसके सतीत्व पर कोई कलंक नहीं आता। यह एक अति मूर्खतापूर्ण कल्पना है। इस्लाम सतीत्व व पवित्रचरित्रता को दोनों हेतु आवश्यक मानता है तथा उसकी दृष्टि में व्यभिचारोपरान्त जिस प्रकार स्त्री का सतीत्व आचरण नष्ट हो जाता है उसी प्रकार पुरूष का भी सतीत्व आचरण नष्ट हो जाता है। उसने कुरआन मजीद में यहाँ तक शिक्षा दी है कि यदि पाणिग्रहण सम्भव न हो तो मनुष्य को सतीत्व सुरक्षा प्रत्येक

दशा में करनी चाहिये तथा इस हेतु धार्मिक कथनों में व्रत धारण करने का आग्रह किया है कि इस प्रकार कामवासना का वेग घट जाता है तथा सतीत्व सुरक्षा का मार्ग निकल आता है।

सतीत्व महत्व ही था जिसने अल्पकालिक विवाह का मार्ग निकाला था कि यदि मनुष्य पूर्ण कालिक विवाह करके स्त्री के सम्भरण का भार नहीं सहन कर सकता हो कम से कम विधवा, विवाह विच्छेदित अथवा वृध्द स्त्री से मुताह (अल्पकालिक विवाह) ही कर ले कि कम से कम उसके सतीत्व की रक्षा ही हो जाए तथा वह किसी दुराचार या पाप से लिप्त न हो। इस्लामी समाज का यह दुर्भाग्य है कि उसमें ऐसे व्यक्ति भी अनुकरणीय हो गये हैं जो इस्लाम की इन गूढ़नीतियों से अनभिज्ञ थे तथा उन्होंने मुता (अस्थाई विवाह) का मार्ग बन्द करके व्यभिचार का मार्ग खोल दिया तथा स्त्री पुरूष दोनों के सतीत्व का रक्तपात कर दिया।

## 3.चीर अथवा प्राचीर

पर्दे के विषय में एक समय से ये तर्क वितर्क प्रचलित है कि पर्दा चादर का नाम है या प्राचरि का, कि स्त्री को घर से बाहर पग रखने का भी अधिकार नहीं है। पुरातन काल में साधारण रूप से तथा वर्तमान युग में वृतान्तकर्ता वर्ग में यह विचार पाया जाता है कि पर्दा प्राचरि में रहने का नाम है, कि स्त्री इस चतुः सीमा

से बाहर निकल आई तो मानों उसका पर्दा समाप्त हो गया तथा उसकी गणना निर्लज्ज एवं कुचरित्र स्त्रियों में होने लगी।

यह कल्पना वैभव काल व ज़मीदारी में वास्तव में श्रध्देय थी कि पुरूषों को भी कोई कार्य नहीं था, तो स्त्रियों के बाहर जाने की क्या आवश्यकता थी किन्तु वर्तमान युग में जबकि प्रत्येक व्यक्ति का जीवन समस्याओं में भाग लेने तथा कर्मठ करके खाने पर आश्रित है यह कल्पना असाध्य है तथा इसी कारण इस्लाम को अपयश से प्रतियोगिता करनी पड़ी है कि उसने स्त्रियों को बन्दी बना कर रख दिया तथा उन्हें किसी समाजी कार्यक्रम में भाग नहीं दिया है यधपि ऐसा कदापि नहीं है। इस्लाम की स्पष्ट घोषणा है कि स्त्री तथा पुरूष दोनों अपने कर्मफल के मालिक हैं तथा जिसका अभिप्राय ही यह है कि दोनों को कार्य करने तथा पैसा कमाने का अधिकार है तथा किसी एक को भी इस अधिकार से वंछित नहीं किया जा सकता है।

प्राचरि भीतर रहना वास्तव में एक सौन्दर्य तथा अनेकों विपत्तियों से सुरक्षित रहने का एक माध्यम है कि प्रकृति ने स्त्री के अस्तित्व में एक आकर्षण शक्ति रख दी है तथा उसका समाज में आना जाना अनेकों कार्यों में विध्न पड़ने का कारण बन सकता है परन्तु इसके विपरीत उसके अस्तित्व को सीमित नहीं किया जा सकता और इसे उपद्रव व पाखण्ड से पवित्र वातावरण में बाहर निकलने का

प्रत्येक रूप में अनुमति देना होगी अन्यथा वह ज्ञान व श्रेष्ठता से वंचित तथा जीवन समस्याओं से पृथक रह जाएगी।

इस्लाम ने विभिन्न परिस्थितियों में स्त्री को घर में बैठने के आदेश दिये हैं उसके पृथक पृथक आधार हैं तथा पर्दे के प्रसंग में उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। उदाहर्णाथ स्त्री को पतिदेव की बिना आज्ञा के घर से बाहर जाने से रोका है तो इसका उद्देश्य पति के अधिकार की रक्षा है तथा उसकी इच्छा का आदर है अन्यथा अनिवार्यता के मार्ग में उसे भी अवरोध उत्पन्न करने का कोई अधिकार नहीं है।

इसी प्रकार पति परित्याग (तलाक़) के पश्चात् इद्दतकाल (वह निर्धारित अवधि जिसमें स्त्री घर के बाहर नहीं जा सकती है) मैंने उसे घर के बाहर जाने से प्रतिबन्धित किया है ताकि प्रत्येक समय पति के सम्मुख रहे कदाचित किसी समय उसकी प्रेम भावना जागृत हो उठे तथा पुरातन समबन्ध पुनः स्थापित हो जाए।

मृत्यु उपरान्त इद्दये वफ़ात (धर्म के आदेशानुसार वह समय जिसमें स्त्री का पति के मरने के पश्चात घर से बाहर जाना निशिध्द है) में भी घर के बाहर जाने पर प्रतिबन्ध, शोक प्रदर्शन की एक विधि है, अन्यथा आवश्यक होने की दशा में स्त्री बाहर जा सकती है, इस पर किसी प्रकार की रोक नहीं तथा न इस प्रतिबन्ध का पर्दे से कोई सम्बन्ध है एवं यही कारण है कि यह प्रतिबन्ध उन स्त्रियों हेतु भी है जिन्हें वृध्दा अवस्थावश पर्दे से क्षम्य कर दिया गया है या एतक़ाफ़ (किसी

अनुनय के कारण मस्जिद के भीतर रहने) में पुरूषों पर भी है, की मस्जिद प्राचीर से नहीं निकल सकते यधपि इस प्रसंग का पर्दे से कोई सम्बन्ध नहीं है।

## 4.इस्लामी पर्दा या समाजी पर्दा

हमारा समाज इस्लाम से इस सीमा तक भिन्न है कि बहुधा मामलों में इस्लाम के विपरीत तथा संघर्षरत है तथा इसी कारण इस्लाम को अपयशता का सामना करना पड़ता है। उदाहर्णाथ हमारे समाज के नामहरम (जिन स्त्री पुरूषों में परस्पर विवाह हो सकता है) इस्लाम के नामहरमों से बिल्कुल भिन्न है, समाज में, चाची, मामी, साली, भावज इत्यादि को नामहरम नहीं माना जाता तथा उनसे पर्दे की कोई आवश्यकता नहीं है, समाज में गोद लिया दत्तक पुत्र नामहरम नहीं है, इस्लाम में वह भी नामहरम है, समाज में घर में काम काज करने वाले अनुचर नामहरम नहीं कहे जाते, इस्लाम में वह भी नामहरम है, समाज में बहु (पुत्र की धर्म पत्नि) के साथ नामहरम जैसा व्यवहार किया जाता है, यधपि कि वह महरम है तथा उसके साथ आजीवन किसी भी समय विवाह नहीं हो सकता है, जबकि चाची या मामी से चाचा तथा मामा के देहान्तोपरान्त या भावज से भाई की मृत्यु के पश्चात या साली से पत्नि के पश्चात विवाह सम्भव है तथा यही लक्षण है कि ये स्त्रियाँ नामहरम हैं, कि इस्लाम में महरम वह स्त्री है जिससे जीवन में कभी भी विवाह न

हो सके तथा जिस स्त्री से किसी भी दशा में पाणीग्रहण सम्भव है वह नामाहरम है महरम नहीं है।

पति के भाई से पर्दा न करना तथा पति के अन्य मित्रों या सम्बन्धियों से पर्दा करना केवल एक समाजी नियम है इसका इस्लाम से कोई सम्बन्ध नहीं, इस्लामी दृष्टिकोण से दोनों नामहरम हैं तथा दोनों से अनिवार्य होने की सीमा तक पर्दा होना चाहिये यह और बात है कि जिनसे पर्दा न करने से उपद्रव या झगड़े का भय है उनके सम्बन्ध में उग्रता की आवश्यकता है तथा जिनके बारे में इस प्रकार का भय नहीं है उनके सम्बन्ध में केवल अनिवार्य को पर्याप्त समझा जा सकता है।

## 5.इस्लामी पर्दा क्या है

पर्दा को प्राचीर, बुरक़ा, चादर या नक़ाब आदि में सीमित कर देना ही इस्लाम के अनुकरणीय होने का कारण बना है। जबकि खुली हुई बात है कि इस्लाम में वस्त्रों की विभक्ति, निर्माण, रचना का कोई महत्व नहीं है। इस्लाम स्त्री के समस्त शरीर के छिपाए रखने की माँग करता है तथा मात्र इस परिणाम में मुखमण्डल खुला रखने या हाथों के खोलने की आज्ञा देता है जिस से जीवन कार्य निलंबित न हो पाए, इसके प्रत्येक अलंकार के प्रदर्शन का प्रतिबंधित करता है कि स्त्री श्रृंगार का प्रदर्शन पुरूष हेतु वासना उग्रता तथा समाज हेतु उपद्रव, झगड़ा, मदभेद का कारण बन सकता है।

उपद्रव विपत्ति से सुरक्षित होने के उपरान्त अन्य किसी प्रकार का अतिरिक्त प्रतिबन्ध लागू नहीं किया जा सकता तथा स्त्री को हर प्रकार की स्वतंत्रता दी जा सकती है वह कार्यालयों में भी काम कर सकती है, स्कूलों में शिक्षा भी ग्रहण कर सकती है, जीवन के प्रसंगों में भाग भी ले सकती है, समाजी मामलों का समाधान भी कर सकती है। प्रतिबन्ध यह है कि समाज दुः शील तथा कुस्वभावी न हो एवं उसमें इस स्वतंत्रता को सहन करने की क्षमता पाई जाती हो।

## कुरआन मजीद ने पर्दे के विषय में कुछ बातों की ओर संकेत किया हैः-

1.दृष्टि का नीचा रखना

यह पुरूष स्त्री दोनों को आदेश दिया गया है।

2.अपनी ओढ़नी को वक्ष पर डाले रखना

यह लक्षण है कि सिर का छिपा होना आवश्यक है इसके पश्चात मुखड़ा खुला भी रहे तो कोई हानि नहीं है इस लिये कि ओढ़नी अथवा चादर मुखड़ा छिपाने का माध्यम नहीं उसके द्वारा सिर तथा शरीर के कुछ भागों को सुरक्षित किया जाता है।

3.पाँव पटक कर न चलना

कि इस से आभूषण की झनकार उत्पन्न होती है तथा उससे समाज में उपद्रव तथा पाखण्ड उत्पन्न हो सकता है।

4.वार्ता में लगावट का न होना

कि इस प्रकार से वार्ता करने से भावनाओं में अशान्ति तथा विचारों में कोलाहल उत्पन्न हो सकता है।

5.वाहय श्रृंगार के प्रदर्शन का औचित्य

कि जो सज्जा श्रृंगार अथवा उनके स्थान गुप्त रहते हैं उनका प्रदर्शन वर्जित है किन्तु जो स्वतः स्पष्ट है कि उनके निहित करने का उत्तरदायित्व नहीं है।

इन समस्त प्रसंगो का गूढ़ मनन किया जाए तो अनुमान होगा कि इस्लाम के पर्दे का आदेश अति सरल तथा अनुकरणीय है, समाज की मूर्खता अथवा अनुचित विधि ने उसे जटिल तथा असांध्य बना दिया है।

उदार्णाथ एक संयुक्त परिवार में घर के निकटतम नातेदार साधारणतयः भावना की अशान्ति का आखेट नहीं होते तथा न ही उनके द्वारा किसी प्रकार के उपद्रव होने की कोई आशंका है इस कारण उनके समक्ष यदि मात्र अनिवार्य की सीमा तक पर्दा किया जाए तो कोई हानि नहीं है तथा अनिवार्य पर्दे में मुखड़ा सम्मिलित नहीं है, मुखड़े का सम्मिलित होना उपद्रव व विकार के स्थान पर होता है तथा घर के भीतर कोई अभ्यस्त सम्भावना नहीं है।

अनिवार्य होने के स्तर तक पर्दे में जितने शरीर का छिपाना अनिवार्य है उसमें सारा शरीर, शलवार तथा जम्पर या कुर्ते और पजामें से छिप जाता है केवल सिर तथा ग्रीवा का भाग शेष रहता है वह एक ओढ़नी या रूमाल से छिपाया जा सकता है जिसका सिरा वक्ष पर डाल दिया जाए तथा इस प्रकार स्त्री समस्त घर के महरम नामहरम व्यक्तियों के सम्मुख आ सकती है एवं किसी प्रकार की कठिनाई नहीं है हाँ यदि किसी स्त्री को सिर पर ओढ़नी लपेटना भी कठिन भार हो तो इसका इस्लाम के पास कोई उपाय नहीं इस्लाम उपासना भाव द्वारा समस्याओं का समाधान चाहता है, किसी मनुष्य में उपासना की भावना ही न हो तो उसके प्रसंगों का कोई समाधान नहीं है।

आशचर्यजनक विषयः विचित्र तथा अदभुद विषय ये है कि एक ओर पूरब परदे से अक्षमता की घोषणा कर रहा है तथा दूसरी ओर पश्चिमी देशों में पर्दे की प्रवत्ति बढ़ती जा रही है............. उन्होंने आवरण विहीनता के विकार एंव अवगुण का गूढ़ अध्य्यन कर लिया है तथा उनके कुपरिणाम से परिचित हो गये हैं। मेंरे प्रत्यक्षदर्शन के आधार पर पश्चिम में मुसलमान स्त्रियों में पर्दे की प्रवृत्ति पूरब से कहीं अधिक है। यहाँ तक कि पूरब कि स्त्रियों में आवरण विहीनता की माँग होती है तथा कुछ स्त्रियाँ पतियों से पर्दा करने के विषय में संघर्षरत है तथा पश्चिम में स्कूलों एवं कार्यालयो में पर्दे की माँग वेग धारण करती जा रही है तथा मुसलमान अन्य जातियों से ये माँग करते जा रहे हैं कि पर्दा इस्लाम का एक कृत्य तथा

मुसलमान स्त्रियों का एक विभेद है अस्तु इसे आवरणविहीन करके अपनी विशेषता से वंचित नहीं किया जा सकता है तथा पश्चिम राष्ट्र इन अभियाचनाओं के सम्मुख विनम्रता पूर्वक झुक रही है कि हमें किसी के धर्म में हस्तक्षेप या किसी की निजी स्वतंत्रता प्रतिबंधित करने का कोई अधिकार नहीं है।

यदि पूरब की स्त्रियाँ इस सीमा तक जागरूक हो जाती तथा उन्हें भी इन अनुभवों का आभास हो जाता जिनका पश्चिमी स्त्रियाँ निर्वाह कर रही है अथवा कर चुकी हैं तो अनुचित स्वतंत्रता की याचना समाप्त हो जाती तथा अनिवार्य पर्दे के द्वारा लज्जा, वीणा तथा सतीत्व व संयम की सुरक्षा को विश्वसनीय बना लिया जाता तथा यदि पूरब की पवित्रता के प्रशंसाकर्ता अपनी दुर्बलता की ओर आकर्षित हो जाते तथा उन्हें यह आभास हो जाता कि यह अनुचित प्रतिबन्ध इस्लाम के अपयश का कारण हो रहे है अतः इन्हें समाप्त करके केवल धार्मिक नियमों का परिचालन होना चाहिये तथा इसके द्वारा सामाजिक समस्याओं का समाधान होना चाहिये।

ऐसा हो जाता तो यह स्वतंत्रता के दिन न देखने मं आते तथा इस प्रकार इस्लाम अपयशित न हो तथा ऐसा हो गया तो विश्वास कीजिए कि एक बार पुनः इस्लाम कार्यक्षेत्र में आ जाएगा और संसार के राष्ट्रों को स्वीकारना पड़ेगा कि पर्दा जीवन निलंबन का माध्यम नहीं है वरन् वज्जा, व्रीण, स्वाभिमान, सतीत्व एवं संयम की सुरक्षा का माध्यम है।

इस्लाम स्त्रियों की स्वतंत्रता का विरोधी नहीं है, समाजी झगड़ों तथा अशलीलता का शत्रु है तथा इस शत्रुता हेतु शतप्रतिशत सत्यपक्षी।

आपकी रक्षा हो तथा भगवान पथ प्रदर्शन क्षमता दे।

(आप ये किताब अलहसनैन इस्लामी नैटवर्क पर पढ़ रहे है।)

[[अलहम्दो लिल्लाह किताब इस्लाम और पर्दा पूरी टाईप हो गई खुदा वंदे आलम से दुआगौ हुं कि हमारे इस अमल को कुबुल फरमाऐ और इमाम हुसैन (अ.) फाउनडेशन को तरक्की इनायत फरमाए कि जिन्होने इस किताब को अपनी साइट (अलहसनैन इस्लामी नैटवर्क) के लिऐ टाइप कराया।

सैय्यद मौहम्मद उवैस नक़वी]]

# विषय सूची

इस्लाम और पर्दा ........................................ 1

प्राक्कथन ........................................ 2

हिन्दी अनुवाद ........................................ 6

आरम्भ ........................................ 14

बुध्दिः- ........................................ 14

धर्मः- ........................................ 14

मनः- ........................................ 15

प्रतिष्ठाः- ........................................ 16

धनः- ........................................ 16

1.दृष्टि स्वाभिमान ........................................ 32

आवरण आदेश ........................................ 36

पर्दे की सीमायें ........................................ 43

पर्दा तथा आचरण ........................................ 50

निर्णायक प्रयाण स्थूल ........................................ 55

1.आवरण या लज्जा ........................................ 56

2.पर्दा एवं सतीत्व ........................................ 57

3.चीर अथवा प्राचीर ........................................ 58

4.इस्लामी पर्दा या समाजी पर्दा ........................................ 61

5.इस्लामी पर्दा क्या है........................................................................................................................62

कुरआन मजीद ने पर्दे के विषय में कुछ बातों की ओर संकेत किया हैः-........63

विषय सूची........................................................................................................................69